कुल पृष्ठः 40

स्वदेशी पत्रिका

मूल्य 15/-रू.

कार्तिक-मार्गशीर्ष 2082, नवंबर 2025

वंदेमातरम के 150 साल

एक तराना, जो बन गया आंदोलन

स्वदेशी मेला

सचित्र झलक

जगलपुर, छत्तीसगढ़

बसंतकुंज, नई दिल्ली

जमशेदपुर, झारखंड

पूर्णकालिक अभ्यास वर्ग, कर्णावती (गुजरात)

स्वदेशी पत्रिका

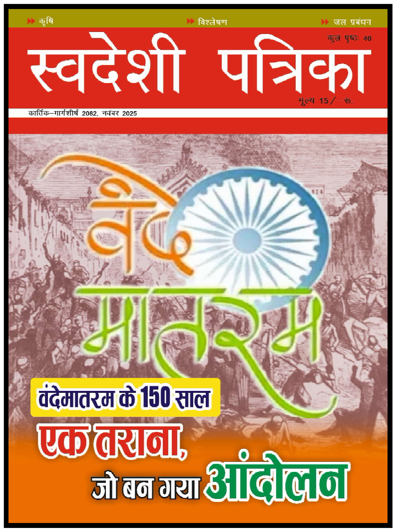

वर्ष–33, अंक–11
कार्तिक–मार्गशीर्ष 2082 नवंबर 2025

संपादक
अजेय भारती

सह–संपादक
अनिल तिवारी

पृष्ठ सज्जा एवं टंकन
सुदामा दीक्षित

कार्यालय
धर्मक्षेत्र, सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022
से प्रकाशित
दूरभाष : 011–26184595
स्वदेशी जागरण समिति की ओर से डॉ. अश्वनी महाजन द्वारा कॉम्पीटेंट बाइन्डर्स (प्रिंटिंग यूनिट), नवीन शाहदरा, दिल्ली–32 से मुद्रित।

पाठकनामा/उन्होंने कहा 4
समाचार परिक्रमा 36-38

तृतीय मुख्य पृष्ठ 39
चतुर्थ मुख्य पृष्ठ 40

अ नु क्र म

आवरण कथा – पृष्ठ–08

वंदेमातरम के 150 साल एक तराना, जो आंदोलन बन गया
अनिल तिवारी

1 मुख्य पृष्ठ
2 द्वितीय मुख्य पृष्ठ

06 आवरण कथा–2
तंत्र स्वदेशी, मंत्र वंदेमातरम्
सरोज कुमार मित्र

11 विचार
मानवता, शाकाहार और उपभोग में संयम
डॉ. अश्वनी महाजन

13 आर्थिकी
अमेरिकी डॉलर का ह्रास, ट्रम्प टैरिफ और नई वैश्विक मुद्रा की तलाश
डॉ. धनपत राम अग्रवाल

17 रिपोर्ट
रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भरता के लिए डीआरडीओ और एचएएल में सुधार
दुलीचंद कालीरमन

19 खेल के मैदान से
भारत की बेटियां बनीं विश्व कप की विजेता
अजय कुमार

21 मुद्दा
नक्सलबाड़ी से गढ़चिरोली तक
अमोल पुसदकर

23 कृषि
घातक होगा दबाव में विदेशी खाद्यान्न हेतु बाजार खोलना
देविन्दर शर्मा

25 पर्यावरण
प्रदूषण की मार से बेहाल है दिल्ली एनसीआर
डॉ. दिनेश प्रसाद मिश्र

27 दृष्टिकोण
कांग्रेस (इंदिरा) – स्वतंत्रता–पूर्व भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नाम का मुखौटा
महादेवय्या करदल्ली

29 भारतीय दर्शन
पूरे विश्व में भारतीय आर्थिक दर्शन को लागू करने का समय अब आ गया है
प्रहलाद सबनानी

31 विश्लेषण
देश की सुरक्षा के लिये चुनौती लेह उपद्रव
विनोद जौहरी

33 प्रेरणा
युगपुरुष दत्तोपंत ठेगड़ीः संगठन, स्वावलंबन और राष्ट्रसेवा के प्रतीक
विकास खितौलिया

पाठकनामा

एसआईआर यानी लोकतंत्र का सशक्तिकरण

स्पेशल इंटेंसिव रिवीजन (एसआईआर) भारत निर्वाचन आयोग द्वारा चुने गए मतदाताओं की सूचियों को अद्यतन और सत्यापित करने की एक व्यापक प्रक्रिया है, जो चुनावों की सटीकता और वैधता सुनिश्चित करती है। 2002 का एसआईआर एक महत्वपूर्ण अभ्यास था, जिसमें डुप्लिकेट और अयोग्य मतदाताओं को हटाकर नए योग्य मतदाताओं को शामिल किया गया, जिससे पारदर्शी चुनावी सूची की नींव रखी गई।

2002 के एसआईआर के बारे में, पूरे भारत में हटाए गए मतदाता कार्डों की सटीक संख्या सार्वजनिक स्रोतों में पूरी तरह उपलब्ध नहीं है, लेकिन रिपोर्टों के अनुसार लाखों नाम–डुप्लिकेट, मृत या अयोग्य मतदाता सूची से हटाए गए ताकि सूची की विश्वसनीयता बढ़े। इस बड़े पैमाने पर सफाई की जरूरत चुनावी गलत व्यवहार को रोकने और हर योग्य नागरिक को मतदाता अधिकारों का उचित उपयोग सुनिश्चित करने के लिए थी। वहीं, 2025–26 का चल रहा एसआईआर इससे भी बड़ा है, जिसमें 51 करोड़ से अधिक मतदाता हैं और यह कई राज्यों और संघ शासित प्रदेशों में किया जा रहा है। इस चरण में बूथ स्तर के अधिकारियों द्वारा घर–घर जाकर सत्यापन किया जा रहा है, जहां कठोर दस्तावेज़ सत्यापन लागू है। विशेषज्ञों का अनुमान है कि लाखों मतदाता रिकॉर्ड संभावित रूप से अमान्य या हटाए जा सकते हैं, विशेषकर वे जिनके पास नागरिकता पहचान या आवास के लिए नवीनतम सख्त मानदंडों के प्रमाण नहीं हैं। मुख्य उद्देश्य है नकली मतदाताओं और गैर–नागरिकों को हटाना और असली नए मतदाताओं को शामिल करना, जैसे हाल ही में 18 वर्ष के हुए या आंतरिक प्रवासी मतदाता।

वर्ष 2002 का एसआईआर करोड़ों अमान्य मतदाता कार्ड हटाकर चुनावी निष्पक्षता को बढ़ावा देने के महत्व को दर्शाता है। वही 2025–26 का एसआईआर आकार और दायरे में कहीं बड़ा है और इसी लक्ष्य को आगे बढ़ाता है, जिसमें संभावित लाखों अमान्य मतदाताओं की पहचान और हटाना शामिल है, जो भारत की स्वतंत्र, निष्पक्ष और विश्वसनीय चुनावों की प्रतिबद्धता को मजबूत करता है।

विजित कुमार (स्वदेशी कार्यकर्ता), दिल्ली

आवश्यक नहीं कि इस अंक के भीतर प्रस्तुत लेखकों के विचार स्वदेशी पत्रिका के संपादक मंडल के विचारों से मेल खाते हों। पाठकों की जानकारी के लिए उन्हें यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

संपादकीय कार्यालय

''धर्मक्षेत्र'' शिव शक्ति मन्दिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्,
नयी दिल्ली–110022

दूरभाष : 011–26184595 • ई–मेलः
swadeshipatrika@rediffmail.com

अगर आप घर बैठे स्वदेशी पत्रिका चाहते हैं तो डिमांड ड्राफ्ट, मनीऑर्डर अथवा चेक द्वारा शुल्क *'स्वदेशी पत्रिका'* दिल्ली के नाम भेजने का कष्ट करें।

वार्षिक सदस्यता शुल्क : 150 रुपए
आजीवन सदस्यता शुल्कः 15,00 रुपए

यदि शुल्क जमा करने के उपरांत भी आपको पत्रिका समय पर उपलब्ध नहीं हो पा रही है तो तुरंत पत्रिका कार्यालय को सूचित करें।

या आप सीधे बैंक ऑफ इंडिया, खाता नं. 602510110002740
IFSC : BKID 0006025 (Ramakrishnapuram)

कहा–अनकहा

हमारी जैव विविधता एक नया आकार ले रही है, देश के युवा कृषि को एक आधुनिक, व्यापक अवसर के रूप में देख रहे हैं। इससे देश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बहुत बढ़ावा मिलेगा।

नरेंद्र मोदी, प्रधानमंत्री, भारत

हमने इस समस्या पर प्रकाश डाला है कि कुछ खिलाड़ियों में अतार्किक उत्साह है, जिनके बारे में हमारा मानना है कि उन्हें बाज़ार के जोखिमों के बारे में पर्याप्त जानकारी नहीं है।

तुहीन कांत पांडे, अध्यक्ष, सेबी

भारत स्वच्छ और हरित ऊर्जा का वैश्विक केंद्र बनने की ओर अग्रसर है। आने वाले वर्षों में हम पर्यावरणीय और जलवायु चुनौतियों से निपटने में विश्व का नेतृत्व करेंगे।

ओम बिड़ला, अध्यक्ष, लोकसभा

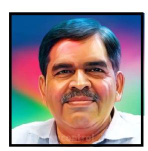

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान, वंदेमातरम् ने भारतीयों में गौरव और बलिदान की भावना जागृत की। इसने लोगों को याद दिलाया कि भारत भूमि केवल भूगोल नहीं, बल्कि एक दिव्य माँ है– पोषण करने वाली, पवित्र और भक्ति के योग्य।

डॉ. अश्वनी महाजन, राष्ट्रीय सहसंयोजक, स्वदेशी जागरण मंच

महिलाओं ने बदल दी बिहार चुनाव की तस्वीर

बिहार चुनाव में एग्जिट पोल से पहले तक एनडीए और महागठबंधन के बीच कांटे की टक्कर मानी जा रही थी। ऐसे कयास भी लगाए जा रहे थे कि शायद बिहार की जनता परिवर्तन के नाते नीतीश कुमार के स्थान पर तेजस्वी यादव को सत्ता सौंप सकती है। नीतीश कुमार की आयु, एंटी इनकुंबेंसी, तेजस्वी यादव की लोकप्रियता आदि जैसे तर्क भी दिए जा रहे थे। लेकिन चुनाव में गिनती के बाद जब महागठबंधन की करारी हार हुई और कांग्रेस का लगभग सूपड़ा साफ हो गया, तो चुनाव विश्लेषक सोचने को मजबूर हो रहे हैं कि आखिर इन परिणामों के पीछे क्या कारण रहा?

चुनाव विश्लेषक एनडीए की जीत के पीछे एक बड़ा श्रेय महिलाओं के भारी समर्थन को दे रहे हैं। यह सच है कि इस चुनाव में महिलाओं ने अभूतपूर्व ढंग से वोटिंग की है। 2024 के संसदीय चुनाव में 59.4 प्रतिशत महिलाओं ने वोट डाला, जबकि पुरुषों का वोट प्रतिशत 53.3 ही रहा था, जबकि 2019 के आम चुनावों में यह प्रतिशत क्रमशः 59.9 और 53.3 प्रतिशत था। लेकिन 2025 के विधानसभा में महिलाओं ने कहीं ज्यादा 71.8 प्रतिशत की रिकॉर्ड वोटिंग की, जबकि पुरुषों का वोट प्रतिशत 63 प्रतिशत रहा। यानी लगभग 9 प्रतिशत बिंदु का अंतर। विभिन्न विधानसभा क्षेत्र का विश्लेषण बताता है कि यह अंतर कई स्थानों पर 10 प्रतिशत से 21 प्रतिशत का भी रहा। पहले चरण में जहां महिला और पुरुष वोटों का प्रतिशत क्रमशः 69 और 61.6 का रहा। लेकिन दूसरे चरण में तो महिलाओं ने और अधिक जोर से वोट डाले और महिला वोट 74.6 प्रतिशत तक पहुंच गए और पुरुष वोट 64.4 तक ही पहुंच पाए। चूंकि महिलाओं द्वारा पूर्व की तुलना में भारी मात्रा में वोट डाले गए, तो यह समझना जरूरी हो जाता है कि इसका क्या कारण रहा होगा? विपक्षी दल इसके पीछे एनडीए सरकार द्वारा चुनाव घोषित होने से थोड़ा पहले मुख्यमंत्री महिला रोजगार योजना के तहत 75 लाख महिलाओं को 10000 रू. की राशि अंतरित करने को कारण मानते हैं। हालांकि इसे झुठलाया नहीं जा सकता कि इस योजना के कारण भी महिलाओं ने एनडीए को समर्थन देने का मन बनाया होगा। लेकिन केवल 10000 रू. की राशि का अंतरण ही महिलाओं को समर्थन का कारण नहीं हो सकता, क्योंकि महागठबंधन ने तो चुनाव प्रचार में महिलाओं को 2500 रू. प्रति वर्ष देने का वादा किया था। इसके साथ–साथ महागठबंधन ने कई और वादे भी किए थे। लेकिन शायद महागठबंधन महिलाओं को अपने वादों से आष्वस्त नहीं कर पाया और महिलाओं ने एनडीए पर अधिक विश्वास जताया।

लालू शासन में सामान्य जनता लचर कानून और व्यवस्था से त्रस्त थी। बलात्कार, अपहरण और फिरौती, हत्याएं और अन्य प्रकार के अपराध बिहार में सामान्य बात थी। इन अपराधों की त्रास्दी अधिकांशतः महिलाओं को ही झेलनी पड़ती थी। महिलाओं को यह डर सता रहा था कि यदि तेजस्वी यादव चुनाव जीतकर मुख्यमंत्री बनते हैं तो इस जंगल राज्य की वापसी हो सकती है। महिलाओं ने नीतीश शासन में महिला सुरक्षा, कानून और व्यवस्था में बेहतरीन सुधार का स्वाद चख लिया था। ऐसे में वे लालू शासन के जंगल राज्य की पुनरावृत्ति नहीं होने देना चाहती थीं। नितीश सरकार के दौरान लागू नशाबंदी ने जिसे सर्वाधिक सुकून दिया वो महिला ही थी। भारत के सर्वाधिक पिछड़े राज्य में शराब महिलाओं के उत्पीड़न सबसे बड़ा कारण थी। महिलाओं को यह भी लगता था कि किसी अन्य दल के शासन के आने से शराबबंदी का कानून निरस्त भी हो सकता है। विकास के अभाव में पलायन जोरों पर था, कानून व्यवस्था की स्थिति लगातार खराब हो रही थी। डॉक्टर, इंजीनियर, व्यवसायी सभी बिहार को छोड़ रहे थे। ऐसे में जब नितीश सरकार ने आकर बिहार की जनता को न केवल बेहतर शासन दिया, बल्कि विकास की शुरुआत भी की और जनकल्याणकारी योजनाएं भी शुरू कर दी। सुशासन बाबू के नाम पर उनकी छवि बनी और उसके बाद से उनकी लोकप्रियता लगातार बरकरार रही। 2014 में केंद्र में प्रधानमंत्री मोदी की अगुवाई में एनडीए की सरकार आने के बाद तो कल्याणकारी योजनाएं व्यवस्थागत रूप धारण कर गई। सबसे पहले जनधन खातों का खुलना और तदुपरांत सीधे लाभ हस्तानांतरण (डीबीटी), शौचालय का निर्माण, प्रधानमंत्री ग्रामीण शहरी आवास योजना के तहत घरों का निर्माण, 100 प्रतिशत बिजली की पहुंच और विद्युत आपूर्ति की निरंतरता, हर घर नल से जल के माध्यम से पेयजल की पहुंच, आयुष्मान भारत योजना से स्वास्थ्य सुरक्षा बेहतर, आंगनबाड़ी सुविधा, उज्ज्वला योजना के तहत गैस सिलेंडरों का मुफ्त वितरण जैसे उपायों से आम बिहारी के जीवन में बड़ा बदलाव आया। देखने में आया है कि अब पलायन रुक गया है और बिहार के मूल निवासी अपने गांव की ओर भी लौटने लगे, जिससे बिहार में विकास की संभावनाएं और बेहतर होने लगी हैं।

कहा जाता है कि बिहार की राजनीति में जाति समीकरण हावी रहते हैं। चुनाव में जाति और बिरादरी के आधार पर वोट डाले जाते हैं। राजनीति को जातिगत समीकरणों के आधार पर आंका जाता है। कहा जा रहा था कि तेजस्वी यादव, यादव और मुस्लिम वोटों के धु्रवीकरण से जीत हासिल कर सकते हैं। लेकिन इस बार महिलाओं ही नहीं पुरुष वोटरों ने भी जातिगत विचार से इतर विकास और सुशासन पर वोट डाला और पुनः एनडीए को सत्ता सौंप दी है। हालांकि राजनीतिक विशेषज्ञ का ध्यान अधिक महिला वोटिंग पर अधिक है लेकिन समझना होगा कि महिलाओं ने ही नहीं, पुरुषों ने भी वोटिंग पहले से ज्यादा की है। बिहार चुनाव में वोटिंग का बढ़ना जाति की बजाय मुद्दों के आधार पर मतदान, महिलाओं की चुनाव में बढ़ती भागीदारी सब भारत में मजबूत होते लोकतंत्र के घोतक है। विपक्षी दलों के लिए भी यह एक चेतावनी है कि वे किसी वर्ग विशेष के तुष्टीकरण, मुफ्त योजनाओं के वादे, जाति समीकरणों के आधार पर चुनाव जीतने की रणनीति से बाहर आकर; सुशासन, जन कल्याण और विकास की राजनीति करें तो उनके लिए संभावनाएं बेहतर हो सकेगी।

तंत्र स्वदेशी, मंत्र वंदेमातरम्

7 अगस्त, 1905 को कलकत्ता के विभिन्न शैक्षणिक संस्थानों से लगभग दस हजार छात्र जुलूस के रूप में टाउन हॉल की ओर निकले। तरह–तरह के अंग्रेज विरोधी नारे और देशात्मबोधक गीत चल रहे थे। तभी किसी ने पुकारा, वंदेमातरम्, हजारों आवाजें गूंज उठी, वंदेमातरम्, वंदेमातरम्। इस जोरदार ध्वनि ने वंदेमातरम् को रण हुँकार में बदल दिया। छात्रों की भीड़ को संभालने के लिए टाउन हॉल में एक साथ तीन सभा की गयी। उस दिन के एक प्रत्यक्षदर्शी मोतीलाल राय ने लिखा है "उस दिन बाजार अपने आप बंद हो गए थे। उसकी छाया में बूढ़े और बीमार लोग भी अपने शरीर को लाठियों से घसीटते हुए वंदेमातरम् चिल्लाते हुए सभा स्थल पर जा रहे थे।" टाउन हॉल की सभा में कासिम बाजार के महाराजा मणिन्द्र चंद्र नंदी के नेतृत्व में विदेशी वस्तुओं, प्रशासन, शिक्षा, न्यायपालिका सभी क्षेत्रों में बहिष्कार का प्रस्ताव रखा गया।

वंदेमातरम् मंत्र

श्री अरविंद ने 1907 में लिखा था– "आज से 32 साल पहले बंकिम ने अपना सर्वश्रेष्ठ गीत वंदेमातरम् लिखा था, लेकिन उस दिन कोई भी यह सुनने को तैयार नहीं था। पूर्व निर्धारित समय पर किसी ने वंदेमातरम् गायन किया। मंत्र दिया गया और एक ही दिन में पूरे देश को देशात्मबोध धर्म में दीक्षित किया गया, माँ ने आत्मप्रकाश किया।" अरविंद ने 1894 में बंबई से प्रकाशित 'इंदु प्रकाश पत्रिका' में नवभारत के निर्माता के रूप में बंकिमचन्द्र के बारे में लिखा, लेकिन वंदेमातरम् के बारे में उल्लेख नहीं किया। यदि संगीत के एक टुकड़े की शब्दावली एक मंत्र है, तो भारतीय ग्रंथों में कई मंत्र दर्ज हैं, पर मन्त्रों द्वारा राष्ट्र में शक्ति संचारित करना दुर्लभ है क्योंकि मंत्र, तंत्र और यन्त्र के समन्वय से ऊर्जा का संचार होता है।

यदि संगीत के एक टुकड़े की शब्दावली एक मंत्र है, तो भारतीय ग्रंथों में कई मंत्र दर्ज हैं, लेकिन मन्त्रों द्वारा राष्ट्र में शक्ति संचारित करना दुर्लभ है क्योंकि मंत्र, तंत्र और यन्त्र के समन्वय से ऊर्जा का संचार होता है।

– सरोज कुमार मित्र

बंकिमचंद्र चटर्जी ने 1875 में वंदेमातरम् की रचना की और 1882 में उनका संन्यास विद्रोह संबंधित 'आनंदमठ' उपन्यास वंदेमातरम् श्रृंखला के रूप में 'बंग दर्शन' पत्रिका में प्रकाशित हुई। पूरे वंदेमातरम् को संशोधित करने और इसे बांगला और संस्कृत में लिखने के अनुरोध को अस्वीकार करते हुए बंकिम ने अपने प्रिंटिंग प्रेस प्रबंधक से कहा, – "यदि आप पचीस वर्ष और जीवित रहेंगे, तो आप देखेंगे कि इसने बंगाल में क्या हलचल मचा दी है।" मृत्यु शय्या पर बंकिम ने अपनी बड़ी बेटी से कहा था– "एक दिन तुम देखोगी कि वंदेमातरम् पूरे देश को आंदोलित करेगा और यह उनकी अंतरात्मा से निकलेगा।" 8 अप्रैल 1897 को बंकिमचंद्र ने यह संसार छोड़ दिया।

22 दिसम्बर 1886 को प्रसिद्ध गायक और अधिवक्ता हेमचन्द्र बनर्जी ने कलकत्ता स्थित टाउन हॉल में दादाभाई नारोजी की अध्यक्षता में आयोजित कांग्रेस के दूसरे सत्र में वंदेमातरम् के कुछ हिस्से गाये थे। फिर 1896 में कलकत्ता में आयोजित कांग्रेस अधिवेशन में रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने स्वयं अपनी आवाज में वंदेमातरम् गाया और कहा "जैसे ही मैंने वंदेमातरम् गाया, मुझे ऐसा लगा जैसे मेरे पूरे शरीर में सिर से लेकर पाँव तक

29 जनवरी, 1908 को अमरावती के नेशनल स्कूल में दिए गए भाषण में अरविंद ने कहा "वंदेमातरम् मंत्र का आविष्कार नहीं हुआ था। यह एक पुराने मंत्र का पुनर्संयोजन है। नबकिशन नामक व्यक्ति के विश्वासघात के कारण यह मंत्र लुप्त हो गया था। 19 फरवरी, 1908 को फिर से अरविंद ने खुलासा किया कि विन्धयाचल में सन्यासी वंदेमातरम् मंत्र की पेशकश करने वाले पहले व्यक्ति थे, लेकिन हमारे कुछ देशवासियों के विश्वासघात के कारण यह मंत्र हटा दिया गया था।

बिजली दौड़ रही हो, मैं गहरी भावना में डूबा हुआ था। यह "संगीत नहीं बल्कि जलता अग्निपुंज था, जिसने श्रोताओं को द्रवित कर दिया।

29 जनवरी, 1908 को अमरावती के नेशनल स्कूल में दिए गए भाषण में अरविंद ने कहा "वंदेमातरम् मंत्र का आविष्कार नहीं हुआ, यह एक पुराने मंत्र का पुनर्संयोजन है। नबकिशन नामक व्यक्ति के विश्वासघात के कारण यह मंत्र लुप्त हो गया था। 19 फरवरी, 1908 को फिर से अरविंद ने खुलासा किया कि विन्धयाचल के सन्यासी वंदेमातरम् मंत्र की पेशकश करने वाले पहले व्यक्ति थे, लेकिन हमारे कुछ देशवासियों के विश्वासघात के कारण यह मंत्र हटा दिया गया था। उस समय राष्ट्र उत्थान के लिए पर्याप्त परिपक्व नहीं था, इसलिए अपरिपक्व अवस्था में उत्थान होने से शीघ्र पतन होता है; लेकिन 1897 में आए भूकंप के दौरान संन्यासियों को एक आवाज सुनाई दी और उन्हें पता चल गया था कि भगवान की इच्छा के अनुसार भारत का उत्थान होगा। विश्व में फिर से मंत्र उन्मुक्त हुआ।

डॉ. राधाकुमुद मुखर्जी लिखते हैं कि बंकिमचंद्र ने ऋग्वेद के अंतिम सूक्त के अंतिम मंडल में वर्णित मंत्र से प्रेरित होकर वंदेमातरम् राष्ट्रगान की रचना की। ऋषि अंगिरस ने अपने निर्धारित देवता को जो प्रार्थना करते हैं और उसी दैवी शक्ति के नामकरण से पता चलता है कि वो गणतंत्र की दैवी शक्ति हैं। एकमात्र दैवी शक्ति का नाम पारंपारिक रूप से पूजे जाने वाले सभी देवताओं से स्वतंत्र है। इस दिव्य शक्ति का नाम समिग्याना या समग्याना है। सायानाचर्या के मत में यह सामूहिक राष्ट्रीय और राजनैतिक चेतना का प्रतीक है और यह चेतना जनता के बीच समान (साम्य) रूप से प्रकट होती हैं, जिसे राष्ट्रीय चेतना कहा जाता है। इस राष्ट्रीय चेतना का विनम्रतापूर्वक आह्वान या प्रार्थना करने से ही मानस या चेतना बलशाली होती है। यह चेतना मजबूत हो जाती है। व्यक्ति–व्यक्ति के बीच की चेतना को योग द्वारा इस विश्व चैतन्य या विश्व चेतन में मिलाना होगा। क्योंकि आत्मा का परमात्मा से मिलन ही योग कहलाता है। इस दिव्य शक्ति की आराधना का मंत्र ऋग्वेद में वर्णित है। लोकतंत्र के उपासकों को अपनी आशाओं, आकांक्षाओं और राष्ट्रीय नीतियों के लिए दिल दिमाग एक करके इस मंत्र का उच्चारण करके पूजा करनी होगी।

जिस दिन विद्यार्थियों ने सामूहिक रूप से वंदेमातरम् मंत्र में अन्तर्निहित शक्ति या राष्ट्र की अंतरात्मा का आह्वान किया और भारत माता को आजाद कराने की शपथ ली तथा कार्यक्रम तैयार हुआ, उस दिन वंदेमातरम् मंत्र से शक्ति का संचार हुआ। 7 अगस्त 1905 को वंदेमातरम् रण हुंकार में बदल गया। यह संयोग का क्षण है बिना धूप, दीप, प्रसाद या शंख, घंटी और आरती के हजारों स्वरों में भारत माता के सहस्र कंठों से वंदेमातरम् के जयकारों के बाद जो ऊर्जा फूटी, उसने अंग्रेज साम्राज्य को हिलाकर रख दिया।

वंदेमातरम् में देवी भारत माता को कमला, वाणीविद्यादायिनी और दशप्रहरण धारिणी दुर्गा रूप में आराधना किए जाने के कारण मूर्तिपूजा न करने वाले ब्रह्म समाज के सदस्य बिपिन चंद्र पाल ने पहले इस पर आपत्ति जताई थी। इसके मीमांसा की जिम्मेदारी चित्तरंजन दास को दी गयी।

जब चित्तरंजन दास ने बिपिन पाल से पूछा कि क्या बंगाल के लोगों से माँ काली को छीनना संभव है? तो बिपिन चन्द्र पाल को अपने भ्रम का एहसास हुआ और उन्होंने कहा, It is not idolatory, it is idealatory. "यह मूर्तिपूजा नहीं है, यह आदर्श की पूजा है।'' मुसलमान भी वंदेमातरम् और अल्लाह–हो–अकबर के ध्वनि के साथ मार्च करके बंगभंग विरोधी आन्दोलन में शामिल हो गए। इसमें मौलवी लियाकत हुसैन प्रमुख थे।

28 सितंबर 1905 महालया के दिन तूफान और बारिश के बावजूद कलकत्ता के कालीघाट मंदिर में छात्रगण नंगे पांव पहुँचे थे। शहर के विभिन्न हिस्सों से कीर्तन दल वंदेमातरम् गान करते हुए आ रहे थे। संख्या बढ़कर पचास हजार हो गई थी। तभी यह असाधारण घटना घटी, शायद इस तरह की सामूहिक रचनात्मक कार्यक्रम भारत के इतिहास में पहला था। हजारों लोगों को जिस राष्ट्रीय मंत्र का आशीर्वाद मिला, उसे आज तक दोहराया नहीं गया। ❑❑

स्रोत– 'तंत्र स्वदेशी, मंत्र वंदेमातरम्' सुरूचि प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तक

वंदेमातरम के 150 साल

एक तराना, जो आंदोलन बन गया

वंदेमातरम के 150 साल पूरे होने का यह जश्न भारत की राष्ट्रीय पहचान के विकास में इस गीत के गहरे ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व को दिखाता है। उन्नीसवीं सदी के आखिर के बौद्धिक और साहित्यिक माहौल से निकला वंदेमातरम अपनी साहित्यिक जड़ों से आगे बढ़कर उपनिवेशवाद विरोधी प्रतिरोध और सामूहिक आकांक्षा का शक्तिशाली प्रतीक बन गया।

–अनिल तिवारी

वंदेमातरम, यह शब्द आते ही मन में देशप्रेम की भावना आती है। देश के सामने सिर नतमस्तक हो जाता है। यह ऐसा मंत्र है, जिसे हृदय में धारण कर देश के सपूत अमर बलिदानी हो गए। देश को ब्रितानी हुकूमत से आजाद कराने के लिए फांसी के फंदे पर झूल गए। यह राष्ट्रगीत ही नहीं, राष्ट्र की आत्मा भी है।

इस साल, 7 नवंबर 2025 को भारत के राष्ट्रीय गीत वंदेमातरम – जिसका आशय है "माँ, मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ"– की 150वीं वर्षगाँठ है। यह रचना, अमर राष्ट्रगीत के रूप में स्वतंत्रता सेनानियों और राष्ट्र निर्माताओं की अनगिनत पीढ़ियों को प्रेरित करती रही है और यह भारत की राष्ट्रीय पहचान और सामूहिक भावना का चिरस्थायी प्रतीक है। 'वंदेमातरम' पहली बार साहित्यिक पत्रिका बंगदर्शन में 7 नवंबर 1875 को प्रकाशित हुई थी। बाद में, बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय ने इसे अपने अमर उपन्यास 'आनंदमठ' में शामिल किया, जो 1882 में प्रकाशित हुई। रवींद्रनाथ टैगोर ने इसे संगीतबद्ध किया था। यह देश की सभ्यतागत, राजनीतिक और सांस्कृतिक चेतना का अभिन्न अंग बन चुका है। इस महत्वपूर्ण अवसर को मनाना सभी भारतीयों के लिए एकता, बलिदान और भक्ति के उस शाश्वत संदेश को फिर से दोहराने का अवसर है, जो वंदे मातरम में समाहित है।

वंदेमातरम के महत्व को समझने के लिए, इसके ऐतिहासिक मूल को जानना बहुत ज़रूरी है। यह एक ऐसा मार्ग है, जो साहित्य, राष्ट्रवाद और भारत के स्वाधीनता संग्राम को जोड़ता है। इस स्तुति गान का एक कविता से राष्ट्रीय गीत बनने तक का सफ़र, औपनिवेशिक शासन के खिलाफ भारत की सामूहिक जागृति का उदाहरण है।

यह गीत पहली बार 1875 में प्रकाशित हुआ था। इस तथ्य की पुष्टि श्री अरबिंदो द्वारा 16 अप्रैल 1907 को अंग्रेजी दैनिक 'वंदेमातरम' में लिखे एक लेख से होती है, जिसमें इस बात का उल्लेख है कि बंकिम ने अपने मशहूर गीत की रचना बत्तीस साल पहले की थी। उन्होंने कहा कि उस समय बहुत कम लोगों ने इसे सुना था, लेकिन लंबे समय के भ्रम से जागृत होने के एक पल में, बंगाल के लोगों ने सच्चाई की तलाश की, और उसी नियत क्षण में किसी ने "वंदेमातरम" गाया। पुस्तक के रूप में प्रकाशित होने से पहले, आनंद मठ बंगाली मासिक पत्रिका 'बंगदर्शन' में धारावाहिक के रूप में छपा था, जिसके संस्थापक संपादक बंकिम थे।

"वंदेमातरम" गीत मार्च–अप्रैल 1881 के अंक में उपन्यास के धारावाहिक प्रकाशन की पहली किस्त में छपा था। 1907 में, मैडम भीकाजी कामा ने पहली बार भारत के बाहर स्टटगार्ट, बर्लिन में जो तिरंगा झंडा फहराया था, उस झंडे पर वंदेमातरम लिखा हुआ था।

उपन्यास 'आनंद मठ' का मूल कथानक संन्यासियों के एक समूह के इर्द–गिर्द घूमता है, जिन्हें संतान कहा जाता है, जिसका आशय बच्चे होता है, जो अपनी मातृभूमि के लिए अपनी ज़िंदगी समर्पित कर देते हैं। वे मातृभूमि को देवी माँ के रूप में पूजते हैं; उनकी भक्ति सिर्फ़ अपनी जन्मभूमि के लिए है। "वंदेमातरम" आनंद मठ के संतानों द्वारा गाया गया गीत है। यह "राष्ट्रभक्ति के धर्म" का प्रतीक था, जो आनंद मठ का मुख्य विषय था।

अपने मंदिर में, उन्होंने मातृभूमि को दर्शाने वाली माँ की तीन मूर्तियाँ रखीं: माँ जो अपनी भव्य महिमा में महान और गौरवशाली; माँ जो अभी दुखी और धूल में पड़ी है; माँ जो भविष्य

में अपनी पुरानी महिमा में पुनः प्रतिष्ठित होगी। श्री अरबिंदो के शब्दों में, "उनकी कल्पना की माँ के 14 करोड़ हाथों में भिक्षा पात्र नहीं, बल्कि तेज़ धार वाली तलवारें थीं।"

वंदेमातरम के रचयिता बंकिम चंद्र चटर्जी (1838–1894), 19वीं सदी के बंगाल की सबसे जानी–मानी हस्तियों में से एक थे। उनके विशेष कार्यों में आनंदमठ (1882), दुर्गेश नंदिनी (1865), कपालकुंडला (1866), और देवी चौधरानी (1884) शामिल हैं, जो अपनी पहचान के लिए संघर्ष कर रहे गुलाम समाज की सामाजिक, सांस्कृतिक और नैतिक चिंताओं को दिखाते हैं ।

वंदेमातरम की रचना को राष्ट्रवादी चिंतन में मील का पत्थर माना जाता है, जो मातृभूमि के प्रति भक्ति और आध्यात्मिक आदर्शवाद के मेल का प्रतीक है। बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय ने अपनी लेखनी के ज़रिए, न केवल बंगाली साहित्य को समृद्ध किया, बल्कि भारत के शुरुआती राष्ट्रवादी आंदोलन के लिए बुनियादी वैचारिक सिद्धांत भी रखे। वंदे मातरम में उन्होंने देश को, मातृभूमि को माँ के रूप में देखने का नज़रिया दिया।

अक्टूबर 1905 में, उत्तरी कलकत्ता में मातृभूमि को एक मिशन और धार्मिक जुनून के तौर पर बढ़ावा देने के लिए एक 'वंदेमातरम संप्रदाय' की स्थापना की गई थी। इस संप्रदाय के सदस्य हर रविवार को "वंदेमातरम" गाते हुए प्रभात फेरियाँ निकालते थे और मातृभूमि के समर्थन में लोगों से स्वैच्छिक दान भी लेते थे। इस संप्रदाय की प्रभात फेरियों में कभी–कभी रवींद्रनाथ टैगोर भी शामिल होते थे।

20 मई 1906 को, बारीसाल (जो अब बांग्लादेश में है) में एक अभूतपूर्व वंदेमातरम जुलूस निकाला गया, जिसमें दस हज़ार से ज़्यादा लोगों ने हिस्सा लिया। हिंदू और मुसलमान दोनों ही शहर की मुख्य्य सड़कों पर वंदे मातरम के झंडे लेकर मार्च कर रहे थे।

अगस्त 1906 में, बिपिन चंद्र पाल के संपादन में 'वंदेमातरम' नाम का एक अंग्रेजी दैनिक शुरू हुआ, जिसमें बाद में श्री अरबिंदो संयुक्त संपादक के रूप में शामिल हुए। अपने तेज़ और प्रभावशाली संपादकीय लेखों के ज़रिए, यह अखबार भारत को जगाने का एक सशक्त माध्यम बन गया, जिसने स्वावलंबन, एकता और राजनीतिक चेतना का संदेश पूरे भारत के लोगों तक फैलाया। निडरता से राष्ट्रवाद का प्रचार करते हुए, युवा भारतीयों को औपनिवेशिक गुलामी से बाहर निकलने के लिए प्रेरित करते हुए, 'वंदेमातरम' दैनिक राष्ट्रवादी चिंतन को ज़ाहिर करने और लोगों की राय जुटाने का एक बड़ा मंच बन गया।

गाने और नारे दोनों के तौर पर वंदेमातरम के बढ़ते प्रभाव से घबराकर ब्रिटिश सरकार ने इसके प्रसार को रोकने के लिए कड़े कदम उठाए। नए बने पूर्वी बंगाल प्रांत की सरकार ने स्कूलों और कॉलेजों में वंदे मातरम गाने या बोलने पर रोक लगाने वाले परिपत्र जारी किए। शैक्षणिक संस्थानों को मान्यता रद्द करने की चेतावनी दी गई, और राजनीतिक आंदोलन में हिस्सा लेने वाले छात्रों को सरकारी नौकरी से निकालने की धमकी दी गई।

नवंबर 1905 में, बंगाल के रंगपुर के एक स्कूल के 200 छात्रों में से हर एक पर 5–5 रुपये का जुर्माना लगाया गया, क्योंकि वे वंदेमातरम गाने के दोषी थे। रंगपुर में, बँटवारे का विरोध करने वाले जाने–माने नेताओं को स्पेशल कांस्टेबल के तौर पर काम करने और वंदे मातरम गाने से रोकने का निर्देश दिया गया। नवंबर 1906 में, धुलिया (महाराष्ट्र) में हुई एक विशाल सभा में वंदे मातरम के नारे लगाए गए। 1908 में, बेलगाम (कर्नाटक) में, जिस दिन लोकमान्य तिलक को बर्मा के मांडले भेजा जा रहा था, वंदे मातरम गाने के खिलाफ एक मौखिक आदेश के बावजूद ऐसा करने के लिए पुलिस ने कई लड़कों को पीटा और कई लोगों को गिरफ्तार किया।

''वंदेमातरम'' गीत भारत के स्वाधीनता संग्राम का प्रतीक बन गया, जो स्व-शासन की सामूहिक इच्छा तथा लोगों और उनकी मातृभूमि के बीच भावनात्मक जुड़ाव को समाहित करता है।

"वंदेमातरम" गीत भारत के स्वाधीनता संग्राम का प्रतीक बन गया, जो स्व–शासन की सामूहिक इच्छा तथा लोगों और उनकी मातृभूमि के बीच भावनात्मक जुड़ाव को समाहित करता है। यह गीत शुरू में स्वदेशी और विभाजन विरोधी आंदोलनों के दौरान लोकप्रिय हुआ और जल्द ही क्षेत्रीय सीमाओं को पार करके राष्ट्रीय जागरण का गान बन गया। बंगाल की सड़कों से लेकर बॉम्बे के दिल और पंजाब के मैदानों तक, "वंदेमातरम" की गूंज औपनिवेशिक शासन के खिलाफ प्रतिरोध के प्रतीक के रूप में सुनाई देने लगी। इसे गाने पर रोक लगाने की ब्रिटिश कोशिशों ने इसके देशभक्ति से जुड़े महत्व को और बढ़ा दिया, और इसे एक ऐसी नैतिक शक्ति में बदल दिया जिसने जाति, धर्म और भाषा की परवाह किए बिना लोगों को एकजुट किया। नेताओं, छात्रों और क्रांतिकारियों ने इसके छंदों से प्रेरणा ली, और इसे राजनीतिक सभाओं, प्रदर्शनों और जेल जाने से पहले गाया जाने लगा। इस रचना ने न केवल विरोध के कामों को प्रेरित किया, बल्कि आंदोलन में सांस्कृतिक गौरव और आध्यात्मिक जोश भी भरा, जिससे भारत के स्वाधीनता संग्राम की राह के लिए भावनात्मक आधार तैयार हुआ।

उन्नीसवीं सदी के आखिर और

बीसवीं सदी की शुरुआत में "वंदेमातरम" बढ़ते भारतीय राष्ट्रवाद का नारा बन गया। 1896 में कांग्रेस के अधिवेशन में रवींद्रनाथ टैगोर ने वंदे मातरम गाया था। 1905 के उथल–पुथल वाले दिनों में, बंगाल में विभाजन विरोधी और स्वदेशी आंदोलन के दौरान, वंदे मातरम गीत और नारे की अपील भी बहुत शक्तिशाली हो गई थी। उसी साल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के वाराणसी अधिवेशन में, 'वंदेमातरम' गीत को पूरे भारत के अवसरों के लिए अपनाया गया।

अप्रैल 1906 में, नए बने पूर्वी बंगाल प्रांत के बारीसाल में बंगाल प्रांतीय सम्मेलन के दौरान, ब्रिटिश हुक्मरानों ने वंदे मातरम के सार्वजनिक नारे लगाने पर रोक लगा दी और आखिरकार सम्मेलन पर ही रोक लगा दी। आदेश की अवहेलना करते हुए, प्रतिनिधियों ने नारा लगाना जारी रखा और उन्हें पुलिस के भारी दमन का सामना करना पड़ा।

मई 1907 में, लाहौर में, युवा प्रदर्शनकारियों के एक समूह ने औपनिवेशिक आदेशों की अवहेलना करते हुए जुलूस निकाला और रावलपिंडी में स्वदेशी नेताओं की गिरफ्तारी की निंदा करने के लिए वंदेमातरम का नारा लगाया। इस प्रदर्शन को पुलिस के क्रूर दमन का सामना करना पड़ा, फिर भी युवाओं द्वारा निडरता से नारे लगाना देश भर में फैल रही प्रतिरोध की बढ़ती भावना को दर्शाता है।

27 फरवरी 1908 को, तूतीकोरिन (तमिलनाडु) में कोरल मिल्स के लगभग हज़ार मज़दूर स्वदेशी स्टीम नेविगेशन कंपनी के साथ एकजुटता दिखाते हुए और अधिकारियों की दमनकारी कार्रवाइयों के खिलाफ हड़ताल पर चले गए। वे देर रात तक सड़कों पर मार्च करते रहे, विरोध और देशभक्ति के प्रतीक के तौर पर वंदेमातरम के नारे लगाते रहे।

जून 1908 में, लोकमान्य तिलक के मुकदमे की सुनवाई के दौरान हज़ारों लोग बॉम्बे पुलिस कोर्ट के बाहर जमा हुए और वंदे मातरम का गान करते हुए एकजुटता प्रदर्शित की। बाद में, 21 जून 1914 को, तिलक के रिहा होने पर पुणे में उनका ज़ोरदार स्वागत हुआ, और उनके स्थान ग्रहन करने के काफी देर बाद तक भीड़ वंदेमातरम के नारे लगाती रही।

17 अगस्त 1909 को, जब मदन लाल ढींगरा को इंग्लैंड में फांसी दी गई, तो फांसी पर चढ़ने से पहले उनके आखिरी शब्द थे "वंदेमातरम।" 1909 में, पेरिस में भारतीय देशभक्तों ने जिनेवा से 'वंदेमातरम' नामक एक पत्रिका का प्रकाशन शुरू किया। अक्टूबर 1912 में, जब गोपाल कृष्ण गोखले केप टाउन, दक्षिण अफ्रीका पहुंचे, तो उनका स्वागत 'वंदेमातरम' के नारे लगाते लोगों के एक बड़े जुलूस के साथ किया गया।

संविधान सभा में जन गण मन और वंदे मातरम दोनों को राष्ट्रीय प्रतीकों के रूप में अपनाने पर पूर्ण सहमति थी और इस मुद्दे पर कोई बहस नहीं हुई। 24 जनवरी 1950 को, डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने संविधान सभा को संबोधित करते हुए कहा कि स्वतंत्रता आंदोलन में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका के कारण, वंदे मातरम को राष्ट्रगान जन गण मन के समान दर्जा दिया जाना चाहिए और समान रूप से सम्मानित किया जाना चाहिए। उन्होंने कहा, "एक मामला है जिस पर चर्चा होनी बाकी है, वह है राष्ट्र गान का सवाल। एक समय सोचा गया था कि यह मामला सदन के सामने लाया जाए और सदन एक प्रस्ताव पास करके इस पर फैसला ले। लेकिन ऐसा महसूस हुआ कि प्रस्ताव के ज़रिए औपचारिक फैसला लेने के बजाय, बेहतर होगा कि मैं राष्ट्र गान के बारे में एक बयान दूं। इसलिए मैं यह बयान दे रहा हूं।

जन–गण–मन नाम के शब्दों और संगीत से बनी रचना भारत का राष्ट्रगान है, जिसमें सरकार ज़रूरत पड़ने पर शब्दों में बदलाव कर सकती है; और वंदेमातरम गीत, जिसने भारत के स्वाधीनता संग्राम में ऐतिहासिक भूमिका निभाई है, उसे जन गण मन के बराबर सम्मान दिया जाएगा और उसका दर्जा भी उसके बराबर होगा। (तालियां)। मुझे आशा है कि इससे सदस्य संतुष्ट होंगे।"

उनके बयान को अपनाया गया और रवींद्रनाथ टैगोर के जन–गण–मन को स्वतंत्र भारत का राष्ट्रगान और बंकिम के वंदे मातरम को जन–गण–मन के बराबर दर्जा देते हुए राष्ट्रीय गीत के रूप में अपनाया गया।

जब देश वंदेमातरम के 150साल पूरे होने का जश्न मना रहा है, तो इस गीत की एकता, विरोध और राष्ट्रीय गौरव की स्थायी विरासत का सम्मान करने की कोशिश में पूरे भारत में यादगार गतिविधियाँ आयोजित की जा रही हैं। संस्थान, सांस्कृतिक संगठन और शैक्षणिक केंद्र गाने के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व को फिर से याद करने के लिए सेमिनार, प्रदर्शनियां, संगीत प्रस्तुतियाँ और सार्वजनिक पाठ आयोजित कर रहे हैं।

निष्कर्ष

वंदेमातरम के 150 साल पूरे होने का यह जश्न भारत की राष्ट्रीय पहचान के विकास में इस गीत के गहरे ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व को दिखाता है। उन्नीसवीं सदी के आखिर के बौद्धिक और साहित्यिक माहौल से निकला वंदेमातरम अपनी साहित्यिक जड़ों से आगे बढ़कर उपनिवेशवाद विरोधी प्रतिरोध और सामूहिक आकांक्षा का शक्तिशाली प्रतीक बन गया। यह आयोजन न केवल बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय के विज़न की स्थायी प्रासंगिकता की पुष्टि करता है, बल्कि आधुनिक भारत में राष्ट्रवाद, एकता और सांस्कृतिक आत्म–जागरूकता के विमर्श को आकार देने में इस गीत की भूमिका के बारे में नए सिरे से सोचने के लिए भी प्रेरित करता है। ❑❑

मानवता, शाकाहार और उपभोग में संयम

मानवता की उत्पत्ति के शुरूआत से ही मांसाहार और शाकाहार दोनों ही मानव की खाद्य आवश्यकताओं की पूर्ति करते रहे हैं। शायद उस वक्त शाकाहार और मांसाहार के बीच में अंतर नहीं होता था, लेकिन बाद में मानव ने मांसाहार और शाकाहार में अंतर करना प्रारंभ किया और आज यह स्थिति है कि प्यू रिसर्च सर्वेक्षण (2021) के सर्वेक्षण के अनुसार भारत में लगभग 39 प्रतिशत भारतीय किसी न किसी प्रकार से मांस के उपयोग से परहेज करते हैं। 39 प्रतिशत लोगों ने इस सर्वेक्षण में स्वयं को शाकाहारी ही कहा है। अधिकांश भारतीय कभी—कभार ही मांस का उपभोग करते हैं। यही कारण है कि भारत में प्रतिव्यक्ति मांस का उपभोग 3.1 किलोग्राम प्रतिवर्ष है, जबकि अमरीका में यह 109 किलोग्राम, यूरोप में 84 किलोग्राम और सकल विश्व में यह 44.5 किलोग्राम प्रतिव्यक्ति प्रतिवर्ष है।

देखा जाए तो भारतीय मांसाहारी होने पर भी धार्मिक आस्थाओं के आधार पर भी कुछ प्रकार के मांस का सेवन नहीं करते। उदाहरण के लिए हिन्दु और सिख गाय के मांस से, मुस्लिम पोर्क के मांस से परहेज रखते हैं। भारत की तुलना में शेष विश्व में शाकाहार का चलन कम है। दुनिया के औसतन 3 से 5 प्रतिशत लोग ही शाकाहारी हैं। अकेले भारत में ही दुनिया के 70 प्रतिशत शाकाहारी रहते हैं। कई बार कुछ लोग आधुनिकीकरण को मांसाहार से जोड़कर देखने लगे हैं। लेकिन हमें समझना होगा कि आधुनिक और समझदारी का विचार मांसाहार में नहीं, बल्कि शाकाहार में है।

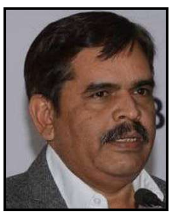

दुनिया में पर्यावरण सम्मेलनों में पर्यावरण से निपटने के लिए टेक्नोलॉजी और उपकरणों की बात तो होती है, क्योंकि उससे वैश्विक कंपनियों को लाभ कमाना होता है, लेकिन वैश्विक उष्णता के लिए जिम्मेदार मांसाहार और उपभोग में बर्बादी और फिजूलखर्ची पर कोई बात करने के लिए तैयार नहीं।

— डॉ. अश्वनी महाजन

पिछले कुछ समय से शाकाहार में भी एक अलग प्रकार का चलन बढ़ रहा है, जिसे वेगन अभियान के नाम से जाना जाता है। इसमें मांस के अतिरिक्त अन्य पशु उत्पाद जैसे दूध और दुग्ध उत्पादों के उपयोग से भी परहेज करने की सलाह दी जाती है। उनका कहना है कि दूध के उत्पादन के लिए पशुओं पर अत्याचार होता है। ऐसा माना जाता है कि विश्व में एक से दो प्रतिशत लोग 'वेगन' आहार अपना चुके हैं। हालांकि वेगनवाद का खासा विरोध

भी हो रहा है कि इस दूध जो शाकाहारी माना जाता है, यदि उसके सेवन से बचा जाएगा, तो इस कारण से पशु पालन जैसे रोजगार के अवसरों पर चोट होने का खतरा उत्पन्न हो सकता है। समझना होगा कि भारत में दूध का उत्पादन और दुग्ध उत्पादों का सेवन हमारी संस्कृति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा रहा है।

क्यों महत्वपूर्ण है शाकाहार?

आज विश्व पर्यावरण असंतुलन, मौसम परिवर्तन और वैश्विक उष्णता यानि ग्लोबल वार्मिंग के भयंकर संकट से गुजर रहा है। औद्योगिकीकरण से पूर्व की तुलना में दुनिया का तापमान लगभग 2 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ चुका है। तब से लेकर अब तक दुनिया की आबादी लगभग 5 गुणा तक बढ़ चुकी है। इस दौरान दुनिया में उपभोग में तो उससे भी ज़्यादा वृद्धि हुई है। वैश्विक उष्णता बढ़ाने में औद्योगिकरण का योगदान तो है ही, लेकिन साथ ही साथ इसके लिए जिम्मेदार ग्रीन हाऊस गैसों का उत्सर्जन इतनी बड़ी जनसंख्या के उपभोग के लिए आवश्यक खाद्य सामग्री और अन्य प्रकार के उत्पादनों के कारण भी हो रहा है। जीडीपी बढ़ने के साथ–साथ लोगों की आमदनी भी बढ़ी है, और उसके साथ ही साथ उपभोक्ता वस्तुओं पर फिजूल खर्ची के साथ–साथ खाद्य सामग्री की बर्बादी भी बढ़ी है। पूर्व में जहां उपभोक्ता वस्तुओं का जीवन लंबा होता था, वर्तमान युग में युज एंड थ्रो यानि इस्तेमाल करो और फेंक दो, की आदत के कारण दुनिया में न केवल कचरा बढ़ा है, बल्कि जरूरत से ज्यादा उत्पादन के कारण ग्रीन हाऊस गैसों का उत्सर्जन भी ज्यादा हुआ है।

समझा जा सकता है कि इस वजह से संयमित उपभोग की जरूरत पहले से कहीं ज्यादा बढ़ गई है। पूरी दुनिया में 71 प्रतिशत क्षेत्र में पानी है और मात्र 29 प्रतिशत ही भूमि है। और इस 29 प्रतिशत में सिर्फ 20 प्रतिशत ही रहने योग्य है, 10 प्रतिशत पर कृषि होती है और इस कृषि योग्य भूमि में सिर्फ 2.4 प्रतिशत पर ही फसलों की खेती होती है और 8 प्रतिशत भूमि पर पशुपालन के लिए जरूरी खेती होती है। इस 2.4 प्रतिशत भूमि पर होने वाली खेती से मनुष्यों की 83 प्रतिशत कैलोरी आवश्यकता पूर्ण होती है और पशुपालन के लिए जहां 8 प्रतिशत भूमि का इस्तेमाल हो रहा है, उससे मात्र 17 प्रतिशत कैलोरी आवश्यकता की पूर्ति होती है। 63 प्रतिशत प्रोटिन की आवश्यकता भी इसी 2.4 प्रतिशत भूमि होती है, जबकि 37 प्रतिशत प्रोटीन ही पशुपालन से उत्पन्न उत्पादों से मिलती है।

भारत के पास दुनिया की सिर्फ 2 प्रतिशत ही भूमि है। जबकि हमारी जनसंख्या दुनिया की 18 प्रतिशत है। दुनिया के 30 प्रतिशत पशु और 8 प्रतिशत जैव संसाधन भारत में पाए जाते हैं। इतनी बड़ी जनसंख्या के लिए खाद्य उत्पादन करने के साथ–साथ भारत अपने जैव संसाधनों का संरक्षण करने में भी सफल रहा है। इसका कारण यह है कि भारत में अधिकांश लोग शाकाहारी हैं और जो मांस का उपभोग भी करते हैं, उनमें से भी अधिकांश कभी कभार ही मांस का सेवन करते हैं। भारत में होने वाला पशुपालन, दुनिया की मांसाहारी जनसंख्या की आवश्यकता की पूर्ति करता है। गौरतलब है कि भारत से प्रतिवर्ष 1.3 करोड़ मीट्रिक टन भैंस के मांस का निर्यात प्रतिवर्ष होता है। भारत की शाकाहारी आदतें दुनिया में खाद्य पदार्थों की कमी नहीं होने देती।

यदि देखें तो विश्व की आबादी में शाकाहारी लोगों में से कुल 70 प्रतिशत अकेले भारत में ही रहते हैं। दुनिया में कुल ग्रीन हाऊस गैसों के उत्सर्जन में मांसाहार के लिए जरूरी पशुपालन से होने वाला उत्सर्जन 15 प्रतिशत है। एक किलो मांस के लिए उत्पादन के लिए उसके बराबर अनाज, दालों या सब्जी के उत्पादन की तुलना में 20 से 30 गुणा ज्यादा ग्रीन हाऊस गैसों का उत्सर्जन होता है। समझा जा सकता है कि दुनिया में यदि 10 प्रतिशत अतिरिक्त लोग भी शाकाहारी हो जाएं तो खाद्य उत्पादन से संबंधित ग्रीन हाऊस गैसों का उत्सर्जन 35 से 30 प्रतिशत कम हो सकता है। मांस के उत्पादन में कहीं ज्यादा, लेकिन डेयरी से मात्र 3.4 प्रतिशत ग्रीन हाऊस गैसों का ही उत्सर्जन होता है, जिसमें आधा मिथेन गैस के उत्सर्जन से, और शेष चारे, यातायात, प्रोसेसिंग, और खाद्य निर्माण में होता है। समझना होगा कि जहां प्रति किलो मांस उत्पादन में 60 किलो ग्रीन हाऊस गैसों (सीओ2ई) का उत्सर्जन होता है, एक लीटर दूध में मात्र 3.2 किलो सीओ2ई का उत्सर्जन होता है।

यदि दुनिया को वैश्विक उष्णता और मौसम परिवर्तन के कष्टों से मुक्ति दिलानी हो तो दुनिया में तेजी से शाकाहार को बढ़ाना होगा। इसी के साथ–साथ यदि भारत की मितव्ययी आदतों को दुनिया अपनाना शुरू कर दें और यूज एंड थ्रो की मानसिकता से बाहर आ जाएं, तो वैश्विक उष्णता के संकट से जल्दी निजात पाया जाएगा। दुर्भाग्य का विषय यह है कि दुनिया में पर्यावरण सम्मेलनों में पर्यावरण से निपटने के लिए टेक्नोलॉजी और उपकरणों की बात तो होती है, क्योंकि उससे वैश्विक कंपनियों को लाभ कमाना होता है, लेकिन वैश्विक उष्णता के लिए जिम्मेदार मांसाहार और उपभोग में बर्बादी और फिजूलखर्ची पर कोई बात करने के लिए तैयार नहीं। ❑❑

(यह लेख मांसाहार के विरोध में नहीं, बल्कि शाकाहार के महत्व को स्पष्ट करने के उद्देश्य से लिखा गया है।)

अमेरिकी डॉलर का ह्यास, ट्रम्प टैरिफ और नई वैश्विक मुद्रा की तलाश

आज सारी दुनिया में एक आर्थिक अनिश्चितता का वातावरण बना हुआ है। कोविड 2019–21 महामारी के बाद रूस–यूक्रेन युद्ध और उसके साथ ही अरब–इसराइल संघर्ष से भू–राजनैतिक अस्थिरता भी बनी हुई है। पर्यावरण की समस्या से प्राकृतिक आपदाओं में भी वृद्धि हो रही है। तकनीकी क्षेत्र में भी बड़ी तेजी से बदलाव आ रहे हैं और आर्टिफीसियल इंटेलिजेंस ने रोजगार के क्षेत्र में अनिश्चितता को और अधिक जटिल बना दिया है, बड़ी–बड़ी कंपनियां मजदूरों की छटनी में लगी हुई हैं। दुनिया में कर्ज की समस्याएं बढ़ रही हैं। जहाँ दुनिया की कुल आय 105 ट्रिलियन डालर है, वहीं दुनिया का कुल ऋण 335 ट्रिलियन डालर के लगभग हो गया है। अमेरिका का राष्ट्रीय ऋण, जो सन् 2000 में सिर्फ़ 5.7 ट्रिलियन डालर था, वह 2025 में बढ़कर 37.5 ट्रिलियन डालर हो गया है। जबकि अमेरिका की कुल आय 28.5 ट्रिलियन डॉलर ही है, यानि आय और ऋण के अनुपात में बहुत वृद्धि हो रही है।

अमेरिका के नागरिकों का ऋण भी 18 ट्रिलियन डॉलर है, जो यह संकेत देता है कि वहाँ के नागरिक अपनी संपत्तियों को गिरवी रखकर तथा क्रेडिट कार्ड पर उधारी लेकर उपभोग कर रहे हैं। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि दुनिया एक भयावह मोड़ पर खड़ी है और एक नई आर्थिक व्यवस्था को तलाश रही है। ऐसी विषम परिस्थितियों में अमेरिका के नये राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प ने जिन आर्थिक नीतियों की घोषणाएँ की हैं, उससे अमेरिकी डॉलर की साख काफ़ी गिरी है और डॉलर की क़ीमत में लगभग 10 प्रतिशत की

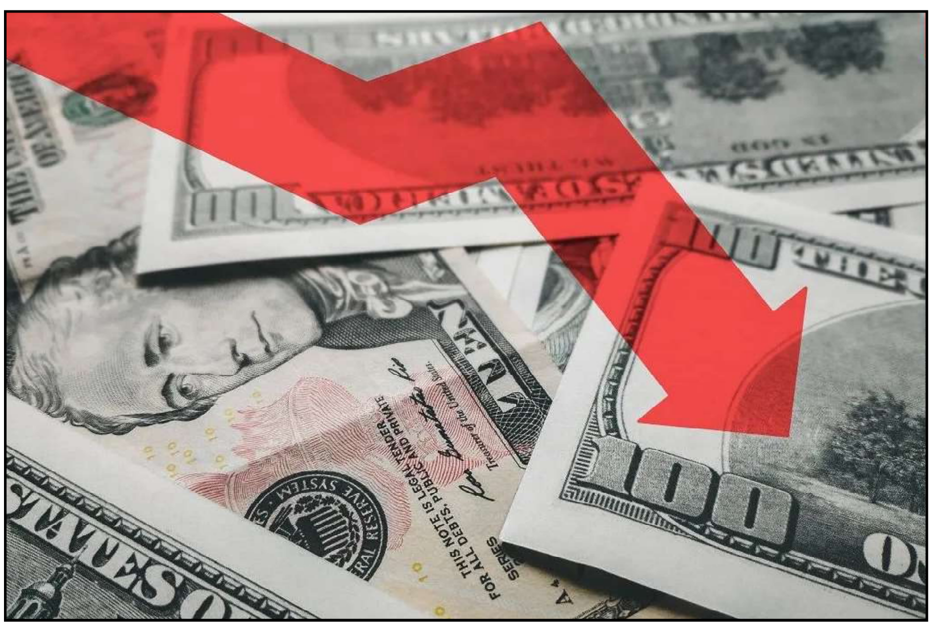

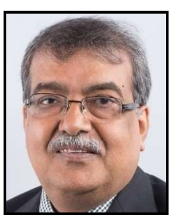

चीन का युआन, यूरोप का यूरो और भारत का रुपया आने वाले दशकों में मिलकर एक बहुध्रुवीय मुद्रा व्यवस्था का निर्माण कर सकते हैं।

– डॉ. धनपत राम अग्रवाल

गिरावट पिछले 9 महीनों में देखी गई है। दुनिया के बहुत से देश डॉलर के रिज़र्व करेंसी को बदलकर एक नई अर्थव्यवस्था के बारे में गंभीर चिंतन कर रहे हैं। इस कारण दुनिया के बहुत से देशों के केंद्रीय बैंक अमेरिकी ट्रेजरी बांड को बेचकर सोने में अपना विनियोजन कर रहे हैं, जिसकी वजह से सोने के दामों में काफ़ी उछाल आ रहा है। पिछले कुछ वर्षों से अमेरिका ने जिस ढंग से डालर छापकर अपनी अर्थव्यवस्था को चलाया है, उससे वहाँ व्यापार घाटा बहुत बढ़ता जा रहा है और बजट पर ब्याज का बोझ भी ज़्यादा हो गया है, जो वहाँ के रक्षा बजट से भी अधिक है। ऐसे में ट्रम्प महोदय आयात को घटाना चाहते हैं और उन्होंने आयात पर कर यानि टैरिफ को काफ़ी बढ़ा दिया है। भारत से आयात पर भी 50 प्रतिशत का शुल्क लगाया गया है। चीन, भारत, रूस आदि देशों ने इसका कोई विकल्प निकालने का विचार किया है तथा ब्रिक्स देशों की बैठक में इसकी चर्चा भी हुई है कि डालर के बदले कोई नई करेंसी को अंतरराष्ट्रीय व्यापार के लिए लाना उचित होगा। इस विषय की गंभीरता पर नीचे विचार किया गया है।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद नई आर्थिक व्यवस्था

द्वितीय विश्व युद्ध के समाप्त होते ही विश्व व्यवस्था में एक बड़ा परिवर्तन आया। राजनीतिक उपनिवेशवाद का दौर समाप्ति की ओर था, परंतु आर्थिक उपनिवेशवाद का एक नया रूप जन्म ले चुका था। ब्रिटिश साम्राज्य, जो सदियों तक वैश्विक व्यापार और वित्त पर हावी रहा था, अपनी शक्ति खो चुका था। इस शक्ति का हस्तांतरण कुछ नई अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं के माध्यम से अमेरिका के हाथों में हुआ। यह हस्तांतरण किसी संयोग का परिणाम नहीं था, बल्कि एक पूर्व निर्धारित रणनीति का हिस्सा था, जिसमें अमेरिका को वैश्विक आर्थिक नेतृत्व सौंपा गया।

ब्रेटन वुड्स व्यवस्था और डॉलर का उदय

जुलाई 1944 में अमेरिका के न्यू हैम्पशायर राज्य के ब्रेटन बुड्स नगर में एक ऐतिहासिक सम्मेलन हुआ, जिसमें 44 देशों ने भाग लिया। इसी सम्मेलन में अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) और विश्व बैंक जैसी संस्थाओं की नींव पड़ी। भारत और चीन भी इसके प्रथम सदस्यों में शामिल थे, लेकिन उस समय दोनों ही परतंत्र देशों की स्थिति में थे और संस्थाओं की संरचना मुख्यतः अमेरिका और इंग्लैंड के हितों के अनुरूप बनाई गई थी।

इससे पहले तक वैश्विक मुद्रा व्यवस्था गोल्ड स्टैंडर्ड और ब्रिटिश पाउंड स्टरलिंग पर आधारित थी। नियम यह था कि जितनी विदेशी मुद्रा छपेगी, उतना सोना सरकार के पास भंडारित होना चाहिए। लेकिन द्वितीय विश्व युद्ध के बाद ब्रिटेन और यूरोप बुरी तरह टूट चुके थे। उनके पास न तो सोना बचा था और न ही पूँजी। इसके उलट अमेरिका सबसे धनी राष्ट्र बन चुका था और दुनिया का लगभग दो–तिहाई सोना उसके पास था।

ब्रेटन वुड्स में यह तय हुआ कि अमेरिकी डॉलर को सोने से जोड़ा जाएगा – 1 औंस सोना=35 डॉलर। साथ ही, बाकी देशों की मुद्राएँ डॉलर से जुड़ेंगी। इस प्रकार डॉलर पहली बार वैश्विक एंकर मुद्रा बन गया।

1971: निक्सन शॉक और फिएट डॉलर का युग

1960 के दशक तक आते–आते अमेरिका पर वियतनाम युद्ध और घरेलू सामाजिक कार्यक्रमों का भारी वित्तीय बोझ बढ़ गया। डॉलर की छपाई तेज हो गई, लेकिन सोने का भंडार उतना नहीं बढ़ा। फ्रांस जैसे देशों ने डॉलर को सोने में बदलने की माँग शुरू कर दी।

15 अगस्त 1971 को राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन ने अचानक डॉलर को सोने से अलग कर दिया। इसे निक्सन शॉक कहा गया। इसके बाद डॉलर एक फिएट करेंसी बन गया, यानी जिसकी कीमत केवल सरकार और बाजार के भरोसे पर आधारित थी।

हालांकि यह कदम डॉलर पर अविश्वास बढ़ाने वाला था, लेकिन दुनिया के पास विकल्प नहीं था। हालांकि आईएमएफ के द्वारा एसडीआर के रूप में एक करेंसी जारी की गई, किंतु व्यापारिक लेन–देन में उसकी स्वीकार्यता नहीं हुई। अमेरिका की अर्थव्यवस्था सबसे बड़ी थी, व्यापार का केंद्र वहीं था और सैन्य शक्ति भी अद्वितीय थी। इसलिए डॉलर का प्रभुत्व बना रहा।

पेट्रोडॉलर सिस्टमः तेल और डॉलर का गठबंधन

1970 के दशक में अमेरिका ने सऊदी अरब और ओपेक देशों से समझौता किया कि तेल का व्यापार केवल डॉलर में होगा। इसके बदले

अमेरिका ने मध्य–पूर्व की सुरक्षा की जिम्मेदारी ली।

इस समझौते ने डॉलर को नया जीवन दिया। चूँकि तेल हर देश की बुनियादी आवश्यकता है, इसलिए सभी देशों को तेल खरीदने के लिए डॉलर की आवश्यकता पड़ती थी। इसी कारण डॉलर की माँग लगातार बढ़ती रही और यह व्यवस्था पेट्रोडॉलर सिस्टम के नाम से प्रसिद्ध हुई।

आज भी तेल, प्राकृतिक गैस, कोयला, अनाज और धातुओं जैसी प्रमुख कमोडिटीज़ का अंतरराष्ट्रीय व्यापार लगभग पूरी तरह डॉलर में होता है। एक अध्ययन के अनुसार लगभग 85 प्रतिशत अंतर्राष्ट्रीय व्यापार तथा अन्य लेन–देन डालर में ही होता है। *(चार्ट–1)*

डॉलर की सर्वोच्चताः 1980 से 2000 तक

1980 और 1990 के दशक में अमेरिका की वित्तीय बाज़ार प्रणाली ने डॉलर को सबसे सुरक्षित निवेश माध्यम बना दिया। आईएमएफ और वर्ल्ड बैंक जैसे संस्थानों में भी डॉलर का ही दबदबा रहा। 2000 तक आते–आते दुनिया के लगभग 70 प्रतिशत विदेशी मुद्रा भंडार डॉलर में रखे जाने लगे। अंतरराष्ट्रीय ऋण, व्यापारिक अनुबंध और वैश्विक निवेश लगभग सभी डॉलर पर आधारित थे। किंतु पिछले 20–25 वर्षों में डालर का अनुपात विदेशी मुद्रा भण्डार के रूप में घटता जा रहा है और वर्तमान में यह सिर्फ 58 प्रतिशत ही रह गया है। वर्तमान समय में जैसे–जैसे डालर की साख गिरती जा रही है, विश्व के अधिकांश केंद्रीय बैंक अमरीकी ब्रांड बेचकर सोने में विनियोजन कर रहे हैं। *(चार्ट–2)*

डॉलर के उतार–चढ़ाव

1. 1970 का महँगाई संकट – अमेरिका में महँगाई बहुत बढ़ी, डॉलर कमजोर पड़ा।
2. 1985 प्लाजा समझौता – जापान और यूरोप के दबाव में अमेरिका ने डॉलर को कृत्रिम रूप से कमजोर किया।
3. 2008 का वैश्विक वित्तीय संकट– संकट अमेरिका से शुरू हुआ, लेकिन अंत में निवेशकों ने फिर डॉलर को "सेफ हेविन" माना।
4. 2020–22 महामारी और रूस–यूक्रेन युद्ध – वैश्विक अनिश्चितता के बीच डॉलर की माँग और बढ़ी।

वैश्विक रिज़र्व संपत्तियों में बदलाव

वर्ष/संपत्ति वर्ग	*डॉलर (यूएस)*	*यूरो*	*युआन*	*सोना व अन्य*
2000	~70%	~18%	<1%	~11%
2010	~65%	~22%	~1%	~12%
2020	~60%	~20%	~2%	~18%
2025	~58%	~20%	~3%	~15%

अमेरिका का बढ़ता ऋण और वित्तीय संकट की जड़ें

- *राष्ट्रीय ऋण (अमरीकी राष्ट्रीय ऋण)*: 2025 तक यह 37.5 ट्रिलियन डॉलर से अधिक पहुँच चुका है, जो अमेरिका की जीडीपी का लगभग 130 प्रतिशत है।
- *वार्षिक बजट घाटा*: अमेरिका का हर साल लगभग 1.5–2 ट्रिलियन डालर का घाटा चला रहा है।
- *व्यापार घाटा*: 2024 में अमेरिका का व्यापार घाटा 1 ट्रिलियन डालर के आसपास रहा।
- *ब्याज भुगतान*: केवल ऋण पर ब्याज भुगतान ही हर साल 1 ट्रिलियन डालर से अधिक हो चुका है।

इन आंकड़ों से स्पष्ट है कि अमेरिका अपनी समृद्धि को बनाए रखने के लिए लगातार ऋण और डॉलर छापने पर निर्भर है। यही कारण है कि दुनिया के

(चार्ट–2)

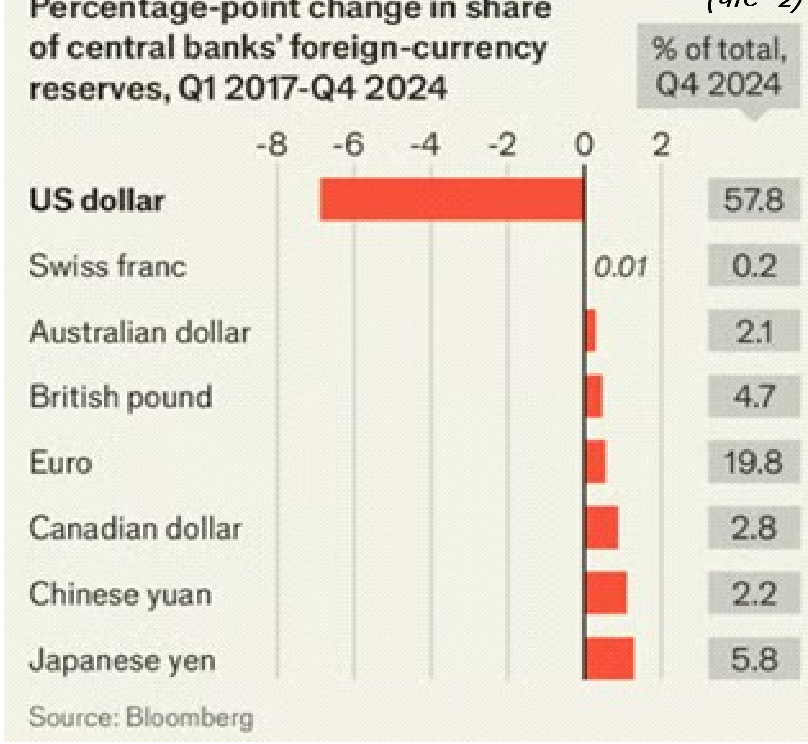

कई केंद्रीय बैंक डॉलर पर भरोसा घटा रहे हैं और अपने भंडार में सोने की हिस्सेदारी बढ़ा रहे हैं।

ट्रम्प टैरिफ और डॉलर पर असर

2025 में राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प ने व्यापक टैरिफ नीति लागू की – लगभग सभी आयात पर न्यूनतम 10 प्रतिशत टैरिफ। यह नीति घरेलू उद्योग को बढ़ावा देने के लिए बनाई गई थी, लेकिन वैश्विक निवेशकों ने इसे अमेरिका की आर्थिक नीति की अस्थिरता और अलगाववाद के रूप में देखा।

- *डॉलर की कमजोरीः* टैरिफ घोषणाओं के बाद डॉलर प्रमुख मुद्राओं (जी10) के मुकाबले लगभग 10 प्रतिशत कमजोर हो गया।
- *निवेशकों का अविश्वासः* विदेशी निवेशक अमेरिकी परिसंपत्तियों से दूरी बनाने लगे।
- *महँगाई और लागत का दबावः* आयातित वस्तुओं पर शुल्क बढ़ने से उपभोक्ताओं पर महँगाई का बोझ पड़ा।
- *दीर्घकालीन असरः* आर्थिक विशेषज्ञों के अनुसार, टैरिफ से अमेरिका की जीडीपी और मजदूरी दोनों पर नकारात्मक असर पड़ेगा।

केंद्रीय बैंकों द्वारा सोने की बढ़ती माँग

- 2022–24 के बीच वैश्विक केंद्रीय बैंकों ने रिकॉर्ड मात्रा में सोना खरीदा।
- वर्ल्ड गोल्ड काउंसिल (डब्ल्यूजीसी) के अनुसार, 2023 में लगभग 1,100 टन सोना खरीदा गया, जो पिछले 50 वर्षों का सबसे बड़ा आंकड़ा है।
- सबसे अधिक सोना खरीदने वालों में चीन, भारत, तुर्की और रूस शामिल रहे।
- इसका कारण है डॉलर पर निर्भरता कम करना और अपने भंडार को सुरक्षित बनाना।

सोने की वार्षिक खरीद (2022–2024)

वर्ष	*कुल खरीद (टन)*	*प्रमुख खरीदार देश*
2022	~ 1,080 टन	चीन, तुर्की, भारत, मिस्र
2023	~ 1,100 टन	चीन, भारत, रूस, तुर्की
2024	~ 950 टन	चीन, भारत, सऊदी अरब, ब्राजील

आज का दौरः वि–डॉलरीकरण की लहर

1. अमेरिकी प्रतिबंधों का डर – रूस के लगभग 300 अरब डालर विदेशी मुद्रा भंडार फ्रीज़ कर दिए गए।
2. चीन का युआन और ब्रिक्स – चीन ने सीआईपीएस प्रणाली विकसित की है, ब्रिक्स देश स्थानीय मुद्राओं में व्यापार पर जोर दे रहे हैं।
3. भारत का रुपया – भारत ने रूस, श्रीलंका, मॉरीशस और यूएई जैसे देशों के साथ रुपये में व्यापार की व्यवस्था शुरू की है। भारतीय रिजर्व बैंक ने वोस्ट्रो एकाउंट के द्वारा रूपये में विदेशी व्यापार को बढ़ाने की नई नीति ग्रहण की है तथा नेपाल, भुटान और श्रीलंका आदि पड़ोसी देशों के साथ विदेशी ऋण भी डालर में नहीं देकर रूपये में ही देना प्रारंभ कर दिया है, ताकि रूपये का अंतर्राष्ट्रीयकरण ज्यादा से ज्यादा हो सके।
4. पेट्रोडॉलर को चुनौती – सऊदी अरब और चीन ने तेल व्यापार का कुछ हिस्सा युआन में करने पर सहमति जताई है।

निष्कर्षः बहुध्रुवीय मुद्रा व्यवस्था की ओर

डॉलर ने पिछले 80 वर्षों से वैश्विक रिज़र्व मुद्रा की भूमिका निभाई है। लेकिन अब वि–डॉलरीकरण की गति तेज हो रही है। अमरीका स्वयं भी अपनी आन्तरिक मौद्रिक नीति में परिवर्तन कर अपने ऋण को कम करने की चेष्टा में है। क्रिप्टो करेंसी का षडयंत्र चल रहा है, जिससे विश्व को सावधान रहने की आवश्यकता है।

निकट भविष्य (10–15 वर्षों) में डॉलर की पकड़ कमजोर हो सकती है, परंतु पूरी तरह समाप्त होना कठिन है। इसके तीन कारण हैं:

1. अमेरिका की अर्थव्यवस्था का आकार।
2. गहरे और तरल वित्तीय बाज़ार।
3. संकट के समय "सैफ हवेन" के रूप में डॉलर पर भरोसा।

फिर भी, चीन का युआन, यूरोप का यूरो और भारत का रुपया आने वाले दशकों में मिलकर एक बहुध्रुवीय मुद्रा व्यवस्था का निर्माण कर सकते हैं। ❑❑

(लेखक स्वदेशी जागरण मंच के राष्ट्रीय सह–संयोजक है।)

स्रोत और संदर्भ

1. IMF – International Monetary Fund Data (2024)
2. World Bank Historical Archives – Bretton Woods Conference ¼1944½
3. US Treasury Department – National Debt Statistics (2025)
4. Bureau of Economic Analysis (BEA), USA – Trade Deficit Data (2024)
5. World Gold Council (WGC) – Central Bank Gold Demand Reports (2022–2024)
6. Bank for International Settlements (BIS) – Triennial FX Survey (2022)
7. Reuters, Bloomberg, Financial Times – De-Dollarization and BRICS Currency Initiatives
8. CEPR, CFR, PBS, Harvard Kennedy School – Trump Tariffs & Dollar Impact Reports (2024–2025)

रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भरता के लिए डीआरडीओ और एचएएल में सुधार

भारत के रक्षा क्षेत्र के सशक्तिकरण और आत्मनिर्भरता की दिशा में कई संस्थाओं ने योगदान दिया है, जिनमें रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन (डीआरडीओ) और हिंदुस्तान एयरोनॉटिक्स लिमिटेड (एचएएल) की भूमिका सबसे अधिक उल्लेखनीय रही है। डीआरडीओ ने आधुनिक तकनीक, मिसाइल प्रणाली, राडार, ड्रोन और युद्धक उपकरणों के विकास में भारत को नई ऊँचाइयों तक पहुँचाया है। वहीं, एचएएल ने लड़ाकू विमानों, हेलिकॉप्टरों और एयरोस्पेस उपकरणों के निर्माण व रखरखाव के क्षेत्र में महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हासिल की हैं। इन दोनों संस्थाओं के संयुक्त प्रयासों से भारत न केवल रक्षा उत्पादन में आत्मनिर्भर बन रहा है, बल्कि वैश्विक स्तर पर भी अपनी तकनीकी क्षमता का प्रदर्शन कर रहा है।

आज के युद्ध में तकनीकी विकास जिस तीव्र गति से हो रहा है, उसे देखते हुए भारत के सामने भी अपनी सेनाओं को आधुनिक बनाने की चुनौती लगातार बढ़ रही है। उत्तरी और पश्चिमी सीमाओं से उत्पन्न सुरक्षा खतरों को ध्यान में रखते हुए नई तकनीक, अत्याधुनिक हथियार प्रणालियों और मारक क्षमताओं का समय पर विकास अत्यंत आवश्यक है। किंतु रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन (डीआरडीओ) और हिंदुस्तान एयरोनॉटिक्स लिमिटेड (एचएएल) कई बार समय पर आवश्यक उपकरण और साजो–सामान उपलब्ध कराने में विफल रहे हैं, जिससे इनकी कार्यकुशलता पर प्रश्नचिह्न खड़ा होता है। परियोजनाओं में देरी और लागत की वृद्धि से न केवल रक्षा तैयारियों पर असर पड़ता है, बल्कि भारत की आत्मनिर्भरता की राह भी कठिन हो जाती है। ऐसे में ज़रूरी है कि इन संस्थाओं में संरचनात्मक सुधार किए जाएँ, निजी क्षेत्र की भागीदारी बढ़ाई जाए और वैश्विक रक्षा उद्योग की नवीनतम प्रवृत्तियों के अनुरूप अनुसंधान एवं उत्पादन की गति तेज़ की जाए, ताकि भारतीय सेना भविष्य के युद्धों के लिए पूर्णतः सुसज्जित और सक्षम बन सके।

इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने 2023 में 'विजय राघवन पैनल' का गठन किया, ताकि रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन (डीआरडीओ) को आधुनिक चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार किया जा सके। इस पैनल का मुख्य लक्ष्य संस्थान

भविष्य में भारत न केवल रक्षा उत्पादन में आत्मनिर्भर बनेगा अपितु रक्षा निर्यात के क्षेत्र में भी एक उभरती हुई शक्ति के रूप में स्थापित होगा।

– दुलीचंद कालीरमन

की कार्यकुशलता बढ़ाना और रक्षा उत्पादन से जुड़ी देरी को समाप्त करना था। रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए विजय राघवन पैनल ने सुझाव दिए हैं कि डीआरडीओ को अपने अनुसंधान कार्यों में गति लानी होगी, परियोजनाओं का समयबद्ध निष्पादन सुनिश्चित करना होगा तथा रक्षा उद्योग में नवाचार और निजी क्षेत्र की सक्रिय भागीदारी को प्रोत्साहित करना होगा। इसके अतिरिक्त, वैश्विक स्तर की तकनीकी प्रवृत्तियों को अपनाकर ही भारत अपनी सेनाओं को आधुनिक और आत्मनिर्भर बना सकता है।

विजय राघवन पैनल के अनुसार रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन (डीआरडीओ) को अपनी ऊर्जा और संसाधनों को मूल अनुसंधान एवं विकास (आर एंड डी) कार्यों पर केंद्रित करना चाहिए। डीआरडीओ वर्तमान में अनुसंधान, विकास और उत्पादनकृतीनों स्तरों पर कार्य कर रहा है, जिससे उसकी दक्षता प्रभावित हो रही है। डीआरडीओ को उत्पादीकरण, उत्पादन चक्र और उत्पाद प्रबंधन जैसे क्षेत्रों से दूरी बनाए रखनी चाहिए, क्योंकि ये जिम्मेदारियाँ निजी क्षेत्र के लिए अधिक उपयुक्त हैं। समिति की इन सिफारिशों का उद्देश्य डीआरडीओ की कार्यक्षमता को बढ़ाना, उसे अनावश्यक जिम्मेदारियों से मुक्त करना और रक्षा क्षेत्र में अत्याधुनिक तकनीक के विकास को गति देना है।

डीआरडीओ के सामने कई गंभीर चुनौतियाँ हैं, जिनके कारण उसकी कार्यकुशलता और साख पर सवाल उठते रहे हैं। सबसे बड़ी समस्या उसकी परियोजनाओं में देरी है। दिसंबर 2023 में 'रक्षा संबंधी संसदीय स्थायी समिति' की रिपोर्ट में बताया गया कि 55 मिशन मोड परियोजनाओं में से 23 समय पर पूरी नहीं हो सकीं। इसी तरह, दिसंबर 2022 में नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (सीएजी) ने अपनी रिपोर्ट में कहा था कि डीआरडीओ की जिन 178 परियोजनाओं की जाँच की गई, उनमें से 67 प्रतिशत निर्धारित समय सीमा के भीतर पूरी नहीं हो पाईं। दूसरी चुनौती अनुसंधान बजट में लगातार गिरावट है, जिसके कारण कई परियोजनाएँ या तो लागत बढ़ने से प्रभावित हुईं या फिर बंद करनी पड़ीं।

विजय राघवन पैनल के अनुसार डीआरडीओ को अपनी ऊर्जा और संसाधनों को मूल अनुसंधान एवं विकास कार्यों पर केंद्रित करना चाहिए। डीआरडीओ वर्तमान में अनुसंधान, विकास और उत्पादन-तीनों स्तरों पर कार्य कर रहा है, जिससे उसकी दक्षता प्रभावित हो रही है।

इसके अलावा, भारत की बाहरी रक्षा खरीद पर निर्भरता भी चिंताजनक है। वर्तमान स्वदेशीकरण दर को देखते हुए अनुमान लगाया जा रहा है कि अगले 10 वर्षों में भारत 80 से 90 प्रतिशत तक स्वदेशीकरण प्राप्त कर सकता है, परंतु अभी तक भारत हथियार आयात के मामले में दुनिया में सबसे आगे है। स्टॉकहोम इंटरनेशनल पीस रिसर्च इंस्टीट्यूट (एसआईपीआरआई) की रिपोर्ट के अनुसार, 2018–22 के दौरान भारत विश्व का सबसे बड़ा हथियार आयातक रहा। यह स्थिति "मेक इन इंडिया" पहल को बाधित करती है। एक अन्य गंभीर चुनौती गुणवत्ता मानकों की है। अक्सर डीआरडीओ के उत्पाद अपेक्षित गुणवत्ता मानकों पर खरे नहीं उतरते।

इन चुनौतियों से निपटने के लिए सरकार डीआरडीओ और एचएएल के पुनर्गठन करने की दिशा में ठोस कदम उठा रही है, ताकि परिचालन दक्षता में वृद्धि हो सके और रक्षा उत्पादों की डिलीवरी में तेजी लाई जा सके। यह कदम विशेष रूप से लाइट कॉम्बैट एयरक्राफ्ट (एलसीए) जैसी महत्वपूर्ण परियोजनाओं में हुई देरी और 2.7 लाख करोड़ रूपये से अधिक के ऑर्डर बैकलॉग को देखते हुए आवश्यक हो गया है। प्रस्तावित बदलावों में एच.ए.एल को स्वतंत्र इकाइयों में विभाजित करना शामिल है, जहाँ प्रत्येक इकाई अलग–अलग एयरोस्पेस विनिर्माण क्षेत्रों में विशेषज्ञता हासिल करेगी। इसके साथ ही, सरकार हिंदुस्तान एरोनॉटिक्स लिमिटेड के एकाधिकार से आगे बढ़कर निजी क्षेत्र की भागीदारी बढ़ाना चाहती है, ताकि एडवांस्ड मल्टीरोल कॉम्बैट एयरक्राफ्ट (एएमसीए) जैसी नई परियोजनाओं में निजी कंपनियाँ भी स्वतंत्र रूप से बोली लगा सकें या अंतरराष्ट्रीय कंपनियों के साथ साझेदारी कर सकें।

इसके पुनर्गठन का उद्देश्य मौजूदा परियोजनाओं की डिलीवरी में तेजी लाना और उत्पादन प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित करना है। साथ ही, हिंदुस्तान एरोनॉटिक्स लिमिटेड की क्षमता को भविष्य की नई परियोजनाओं के लिए भी मुक्त करना है। इसके लिए कंपनी को एक अधिक कॉरपोरेट–शैली के परिचालन मॉडल की ओर ले जाया जा रहा है, जहाँ गति, पारदर्शिता और जवाबदेही को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाएगी। इस दिशा में सरकार ने एक महत्वपूर्ण निर्णय लेते हुए मिसाइल एवं गोला–बारूद निर्माण के लिए निजी क्षेत्र को भी लाइसेंस देने का निर्णय लिया है।

इस पहल से उम्मीद की जा रही है कि निकट भविष्य में डीआरडीओ और एचएएल की पहचान न केवल भारत में, बल्कि विश्व स्तर पर भी मजबूत होगी। भारत न केवल रक्षा उत्पादन में आत्मनिर्भर बनेगा अपितु रक्षा निर्यात के क्षेत्र में भी एक उभरती हुई शक्ति के रूप में स्थापित होगा। ❑❑

भारत की बेटियां बनीं विश्व कप की विजेता

अब भारत का नाम महिला क्रिकेट की विश्व विजेता सूची में दर्ज हो गया है और यह दर्जा केवल खेल का नहीं, बल्कि एक विचार का भी है कि अवसर मिले तो भारतीय बेटियाँ किसी भी ऊंचाई को छू सकती हैं।

–अजय कुमार

नवी मुंबई की वो शाम अब हमेशा याद रखी जाएगी। 2 नवंबर 2025 वो तारीख जब भारत की महिला क्रिकेट टीम ने पहली बार विश्वकप का ताज अपने सिर पर सजाया। यह जीत केवल एक खेल का परिणाम नहीं थी, बल्कि 52 साल के लंबे इंतजार का अंत थी। यह जीत उस विश्वास की कहानी है, जिसे भारत की बेटियों ने अपने परिश्रम, साहस और हौसले से सच कर दिखाया। डी. वाई. पाटिल स्टेडियम में खेला गया यह फाइनल मैच पूरे देश की धड़कनों से जुड़ा था। टीम इंडिया की कप्तान हरमनप्रीत कौर ने टॉस जीतकर पहले बल्लेबाजी का फैसला किया। शुरुआती विकेट जल्दी गिरने से स्टेडियम में हल्की चिंता थी, लेकिन तभी शेफाली वर्मा और दीप्ति शर्मा ने मोर्चा संभाल लिया। शेफाली की बल्लेबाज़ी में आत्मविश्वास झलक रहा था। उन्होंने 87 रन बनाकर भारत को मजबूत स्थिति में पहुंचा दिया। दीप्ति शर्मा ने 58 रनों की समझदारी भरी पारी खेली और बाद में गेंदबाजी में भी अपना जलवा दिखाया। भारत ने निर्धारित 50 ओवर में 7 विकेट पर 298 रन बनाए।

लक्ष्य छोटा नहीं था, लेकिन दक्षिण अफ्रीका की टीम के इरादे भी बड़े थे। उनकी ओपनर लॉरा वोल्वार्ट ने शानदार अर्धशतक लगाया और कुछ देर के लिए भारतीय समर्थक खामोश हो गए। लेकिन रेणुका सिंह और पूनम यादव ने मिलकर खेल की दिशा बदल दी। दीप्ति शर्मा ने गेंदबाजी में कमाल करते हुए 5 विकेट चटकाए और साउथ अफ्रीका को 246 रनों पर रोक दिया। जैसे ही आखिरी विकेट गिरा, पूरा स्टेडियम तिरंगे के रंग में डूब गया। भारतीय टीम 52 रनों से जीत गई और यही 52 साल का प्रतीक बन गया, उस लंबे इंतजार का जो आखिरकार आज समाप्त हुआ। मैदान पर जो हुआ, वह सिर्फ एक खेल की जीत नहीं थी। वह इतिहास की दिशा बदलने वाला क्षण था। जब हरमनप्रीत कौर ने ट्रॉफी उठाई, तो उनके आंसू सिर्फ खुशी के नहीं थे, वो उन सालों का बोझ थे, जब भारतीय महिला क्रिकेट को नजरअंदाज किया गया, जब उन्हें अभ्यास के लिए मैदान नहीं मिलते थे, जब सुविधाएं

सीमित थीं और सवाल बहुत। आज उन सवालों का जवाब तिरंगे के रूप में आसमान में लहराया। यह जीत उन तमाम दिग्गज खिलाड़ियों की भी है जिन्होंने दशकों तक इस सपने के लिए मेहनत की। डायना एडुल्जी, मिताली राज, झूलन गोस्वामी, अंजुम चोपड़ा जैसी खिलाड़ियों ने जो बीज बोया, वह आज फल बनकर सामने आया। उनके संघर्ष ने आने वाली पीढ़ियों को राह दिखाई। अब वही राह और चौड़ी हो चुकी है।

इस जीत के बाद देशभर में जश्न का माहौल है। सड़कों पर जुलूस निकले, गलियों में पटाखे फूटे और सोशल मीडिया पर बेटियों के नाम की गूंज सुनाई दी। लोग इसे 1983 की पुरुष टीम की ऐतिहासिक जीत से जोड़कर देख रहे हैं। तब कपिल देव की टीम ने भारत में क्रिकेट का सपना जगाया था, अब हरमनप्रीत की टीम ने उसे नई ऊंचाई दी है। इस ऐतिहासिक जीत के बाद भारतीय क्रिकेट बोर्ड ने खिलाड़ियों के लिए रिकॉर्ड इनाम की घोषणा की। सरकार ने भी इन खिलाड़ियों को सम्मानित करने की घोषणा की है। देश के प्रधानमंत्री ने इस जीत को भारत की बेटियों की शक्ति बताया और कहा कि आने वाली पीढ़ियों के लिए यह प्रेरणा का स्रोत बनेगी। यह जीत केवल ट्रॉफी की नहीं है, यह समाज की सोच में बदलाव की जीत है। अब कोई यह नहीं कह सकेगा कि लड़कियाँ क्रिकेट नहीं खेल सकतीं। अब माता–पिता अपनी बेटियों में शेफाली की चमक, दीप्ति का धैर्य, हरमन की नेतृत्व क्षमता और स्मृति मंधाना का आत्मविश्वास देखेंगे। स्कूलों और छोटे शहरों में खेल की सुविधाएँ बढ़ेंगी, और क्रिकेट सिर्फ पुरुषों का नहीं, सबका खेल बनेगा।

52 साल का इंतजार, संघर्षों से भरी आधी सदी, और आखिर में यह सुनहरा सवेरा। भारत की बेटियों ने दिखा दिया कि सपने तब पूरे होते हैं जब हार मानने की गुंजाइश न छोड़ी जाए। आज जब कोई बच्ची बल्ला उठाती है, तो उसके साथ पूरे देश की उम्मीद उठती है। जब कोई पिता बेटी को मैदान तक छोड़ता है, तो उसके दिल में गर्व की लहर दौड़ती है। यह जीत आने वाले समय के लिए वह मशाल है जो हर गली, हर स्कूल, हर परिवार तक पहुंचेगी। अब भारत का नाम महिला क्रिकेट की विश्व विजेता सूची में दर्ज हो गया है और यह दर्जा केवल खेल का नहीं, बल्कि एक विचार का भी है कि अवसर मिले तो भारतीय बेटियाँ किसी भी ऊंचाई को छू सकती हैं। उन्होंने इतिहास लिखा, और आने वाली पीढ़ियों को यह भरोसा दिया कि अगर हिम्मत हो, तो 52 साल का इंतजार भी एक दिन खत्म होता है। आज यह जीत सिर्फ़ मैदान की नहीं, हर उस बेटी के सपने की जीत है जिसने कभी कहा था, मैं भी खेलूँगी, और जीतूँगी। ❑❑

:: सदस्यता संबंधी सूचना ::

अधिक जानकारी के लिए देखें :
http://swadeshionline.in/

मान्यवर,

स्वदेशी पत्रिका आज देश में चल रहे स्वदेशी आंदोलनों का स्थापित प्रतीक बन चुकी है। पिछले कई वर्षों से स्वदेशी पत्रिका ने असंगत एवं एकतरफा वैश्वीकरण, जनविरोधी आर्थिक उदारीकरण के विरोध एवं वैकल्पिक और रचनात्मक स्वदेशी आंदोलन के पक्ष में एक सक्रिय प्रहरी के नाते हमेशा आपको जागरूक बनाया है एवं आपसे संवाद स्थापित किया है। विगत कालखंड में इन सभी मुद्दों पर हमें आप जैसे सजग पाठकों का अपेक्षित सहयोग भी मिलता रहा है और भविष्य में भी मिलेगा ऐसा, विश्वास है।

आपसे आग्रह है कि स्वदेशी पत्रिका की आपकी सदस्यता अवधि यदि समाप्त हो गई हो तो कृपया पिछले समय से आगामी वर्ष तक की राशि धनादेश (मनीआर्डर), चेक एवं मांग पत्र (डिमांड ड्राफ्ट) के माध्यम से शीघ्र भेजने की कृपा करें। पत्रिका के लिफाफे के उपर चिपकाए गए पते की प्रथम पंक्ति में सदस्यता अवधि अंकित है। आप अपनी सदस्यता राशि ''स्वदेशी पत्रिका'' के नाम पत्रिका के कार्यालय के पते पर भेज सकते हैं। सदस्यता अद्यतन न हो पाने की स्थिति में वित्तीय कारणों से पत्रिका आगे जारी रखना कठिन होगा।

सदस्यता शुल्क निम्न प्रकार है :–

स्वदेशी पत्रिका	*वार्षिक*	*आजीवन*
हिन्दी	150 रुपए	1500/– रुपए
अंग्रेजी	150 रुपए	1500/– रुपए

हमें आपका सहयोग स्वदेशी आंदोलन को राष्ट्रव्यापी एवं जनोन्मुखी बनाने में प्रमुख भूमिका निभाएगा। कृपया स्वदेशी पत्रिका स्वयं भी पढ़ें एवं अन्य को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। पत्रिका के संबंध में अपना निष्पक्ष विचार हमें अवश्य भेजें।

आप सीधे बैंक ऑफ इंडिया, खाता नं. **602510110002740, IFSC: BKID-0006025 (Ramakrishnapuram)** में जमा करवा सकते हैं और उसकी रसीद और अपना पता आप कार्यालय में अवश्य भेजे।

स्वदेशी पत्रिका कार्यालय, 'धर्मक्षेत्र' शिव शक्ति मंदिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली–22

नक्सलबाड़ी से गढ़चिरोली तक

6 मार्च 2000 को महाराष्ट्र के गढ़चिरोली जिले के सिरोंचा तहसील के असरल्ली गांव में तड़के करीब डेढ़ सौ नक्सलवादियों ने असरल्ली पुलिस स्टेशन को घेर लिया। उन्होंने वहां ड्यूटी पर तैनात पुलिसकर्मियों पर गोलियां चलाईं। इसके बाद उन्होंने पुलिस स्टेशन पर कब्जा कर लिया। पुलिस के हथियार और पैसे लेकर वे आंध्र प्रदेश की दिशा में भाग गए। इस घटना ने उस समय पूरे क्षेत्र में भारी सनसनी फैला दी थी। यह देश की संप्रभुता, कानून और व्यवस्था के लिए नक्सलवादियों की खुली चुनौती थी।

2005 में भी झारखंड के जहानाबाद में नक्सलवादियों ने जेल पर हमला किया, कैदियों को मुक्त कराया, पुलिस स्टेशन तोड़ा और पुलिसकर्मियों को बंधक बनाकर भाग निकले। ऐसी घटनाएं समय–समय पर अखबारों में आती रही हैं। नक्सलवादी आंदोलन का यह एक खूनी इतिहास रहा है।

1967 में पश्चिम बंगाल के नक्सलबाड़ी नामक गांव से चारू मजूमदार और कानू सान्याल नामक दो लोगों ने नक्सलवादी आंदोलन की शुरुआत की। आरंभ में यह आंदोलन भूमिपतियों के विरुद्ध मजदूरों के हक़ की लड़ाई के रूप में शुरू हुआ था, लेकिन धीरे–धीरे इसने हिंसक रूप धारण कर लिया। खून–खराबा शुरू हुआ, सरकार–विरोधी नीति अपनाई गई। सरकारी संपत्ति को जलाना, विकास कार्यों का विरोध करना, पुलिस की मदद करने वाले मुखबिरों की हत्या करना इस प्रकार की अनेक घटनाएँ इन लोगों ने भारत में घटित कीं।

शुरुआत में जनता को लगा कि ये उनके उद्धारक हैं, लेकिन जब लोगों को समझ आया कि इनका मार्ग केवल रक्तपात और भय का है, तो लोग इनसे दूर होने लगे। इस आंदोलन का आधार वनवासी समाज था जो जंगलों में रहता था और शिक्षा, स्वास्थ्य, सड़क, उद्योग जैसी सुविधाओं से वंचित था। इसलिए माओवादी भी जो जंगलों में घूमते थे और इन्हीं लोगों के सहारे यह आंदोलन फैलता गया। लगभग 200 जिलों तक इस हिंसक आंदोलन का प्रसार हुआ।

एक समय गढ़चिरोली का नाम सुनते ही अधिकारी भयभीत हो जाते थे। लेकिन अब उसी गढ़चिरोली की भूमि में खनिज संपदा की खोज के बाद एटापल्ली तालुका में सूरजगढ़ परियोजना अस्तित्व में आई। स्थानीय लोगों को इसमें रोजगार मिला।

–अमोल पुसदकर

परंतु कोई भी सामान्य व्यक्ति भय की छाया में जीवन नहीं जीना चाहता। इसलिए जब नक्सलवाद का चेहरा खूनी बन गया, तो वनवासी समाज भी उनसे अलग होने लगा। हालांकि, फिर भी आदिवासी युवकों को सामान ढोने, भोजन ले जाने जैसे कामों में लगाया जाता। जो युवक थोड़ा होशियार होता, उसे बंदूक देकर आंदोलन में शामिल किया जाता। इस तरह यह कार्य चलता रहा।

समय बीतने के साथ जनता ने इन्हें उद्धारक नहीं, बल्कि हत्यारे समझना शुरू किया। दुर्भाग्य से, अनेक केंद्र और राज्य सरकारों ने लंबे समय तक इस आंदोलन की अनदेखी की और इसी कारण हजारों निर्दोष लोगों को अपनी जान गंवानी पड़ी।

2014 में मोदी सरकार केंद्र में सत्ता में आई। उस समय भारत के 125 से अधिक जिलों में नक्सलवाद सक्रिय था। मोदी सरकार ने आरंभ से ही इस समस्या के विरुद्ध कठोर और प्रभावी नीति लागू की। पुलिस और अर्धसैनिक बलों को अत्याधुनिक हथियारों से सुसज्जित किया गया। नक्सलियों के ठिकानों का पता लगाने के लिए आधुनिक तकनीक का उपयोग किया गया। एक राज्य में अभियान चलाते समय यह सुनिश्चित किया गया कि नक्सली दूसरे राज्य में भाग न सकें। गुप्त सूचनाओं का कुशल उपयोग हुआ।

सरकार ने यह भी सुनिश्चित किया कि जिस जनता के बीच नक्सली छिपकर काम करते थे, उस जनता को सड़क, शिक्षा, स्वास्थ्य, बिजली, पानी जैसी मूलभूत सुविधाएं प्रदान की जाएं। इसका परिणाम यह हुआ कि विकास देखने वाले विद्यार्थियों के मन से हिंसक नक्सलवाद पूरी तरह उतर गया। स्थानीय लोगों का समर्थन नक्सलवादियों से छिन गया। पुलिस और अर्धसैनिक बलों में भी यह आत्मविश्वास जागा कि सरकार हमारे साथ है।

2014 में मोदी सरकार केंद्र में सत्ता में आई। उस समय भारत के 125 से अधिक जिलों में नक्सलवाद सक्रिय था। मोदी सरकार ने इस समस्या के विरुद्ध कठोर और प्रभावी नीति लागू की। पुलिस और अर्धसैनिक बलों को अत्याधुनिक हथियारों से सुसज्जित किया गया।

मुठभेड़ों में घायल जवानों को तुरंत हेलिकॉप्टर से अस्पताल पहुँचाया जाने लगा। इससे यह संदेश गया कि सरकार का निर्णय नक्सलवाद का पूर्ण अंत करना है। नतीजतन, बड़ी मुठभेड़ों में बड़ी संख्या में नक्सली मारे जाने लगे।

सरकार ने समानांतर रूप से नक्सलियों से यह भी अपील की कि वे हथियार डालकर मुख्यधारा में लौटें। उनके सामने दो विकल्प रखे गए—

1. जंगलों में भटकते हुए धूप, बारिश और ठंड का सामना करते हुए मौत का इंतजार करें, या
2. हथियार छोड़कर सामान्य जीवन अपनाएं।

कुछ नक्सली समूहों ने सरकार से बातचीत का प्रस्ताव दिया, पर सरकार ने स्पष्ट कहा, हथियार रखे बिना कोई बातचीत नहीं।

धीरे–धीरे नक्सलियों ने जनता का विश्वास खो दिया। नई भर्ती पूरी तरह रुक गई। अब उन्हें स्वयं ही अपना सामान ढोना, खाना पकाना और लड़ाई लड़नी पड़ती थी। पहले गांवों में उन्हें आश्रय मिल जाता था, पर अब गांववालों ने अपने गांव की सीमा पर बोर्ड लगा दिए नक्सलियों का प्रवेश वर्जित है।

जो युवक पहले नक्सलियों की मदद से पैसे कमाता था, वह अब पुलिस बल में भर्ती होकर देश की सेवा कर रहा है। नक्सलियों को यह समझ आ गया कि अब यह आंदोलन अधिक समय तक नहीं चलेगा।

एक समय गढ़चिरोली का नाम सुनते ही अधिकारी भयभीत हो जाते थे। तुम्हें गढ़चिरोली भेज दूँ क्या? – यह वाक्य सरकारी दफ्तरों में डराने के लिए कहा जाता था। लेकिन अब उसी गढ़चिरोली की भूमि में खनिज संपदा की खोज के बाद एटापल्ली तालुका में सूरजगढ़ परियोजना अस्तित्व में आई। स्थानीय लोगों को इसमें रोजगार मिला। इसके बाद लॉयड मेटल की परियोजना इसी गढ़चिरोली जिले के कोनसरी गांव में शुरू हुई। यह परियोजना इतनी बड़ी है कि गढ़चिरोली का रूप भविष्य में टाटानगर जैसा हो सकता है। इन विकास परियोजनाओं ने गढ़चिरोली का चेहरा बदलना शुरू कर दिया है।

और अंत में नक्सलवादियों के कुख्यात नेता भूपति, जिसके सिर पर करोड़ों का इनाम था, वह अपने साठ साथियों के साथ आत्मसमर्पण कर गया। उसने हथियार डाल दिए। यह गढ़चिरोली जिले के लिए एक नई शुरुआत थी। आने वाले समय में जंगलों और गांवों में छिपे अन्य नक्सली भी आत्मसमर्पण कर इस मार्ग को पूरी तरह त्याग सकते हैं।

जो नक्सली बंदूक लेकर लड़ रहे थे, जितने खतरनाक थे, उतने ही खतरनाक हैं शहरों में रहने वाले अर्बन नक्सलवादी। इन्हें भी ढूंढकर जेल भेजने की आवश्यकता है, क्योंकि यही वे लोग हैं जो भोले–भाले, अशिक्षित लोगों को सरकार और संविधान के विरुद्ध हथियार उठाने के लिए भड़काते हैं। आने वाले समय में सरकार को इनकी जड़ें भी पूरी तरह उखाड़ फेंकनी होंगी और "नक्सलबाड़ी से गढ़चिरोली" तक का यह रक्तरंजित सफर सदा के लिए समाप्त करना होगा। ❑❑

(प्रसिद्ध वक्ता एवं लेखक)

घातक होगा दबाव में विदेशी खाद्यान्न हेतु बाजार खोलना

भारत को उन दिनों में वापस नहीं जाने दिया जा सकता जब देश का पेट भरने के लिए खाद्यान्न समुद्री जहाजों से आया करता था। भूख से आज़ादी सुनिश्चित करने से ज़्यादा ज़रूरी कुछ नहीं है, और वह भी किसी भी कीमत पर।

ऐसे समय में जब अन्न फसलें – गेहूं और धान की खेती अभी भी अपना वजूद बनाए हुए हैं, शेष लगभग सभी प्रमुख फसलों की चमक फीकी पड़ गई है। चाहे वह दालें हों, तिलहन (सोयाबीन सहित), कपास और मक्का, इनकी कीमतें तेजी से गिर रही हैं। खतरे की घंटियां इससे पहले इतनी ज़ोर से कभी नहीं बजीं। वाणिज्य मंत्री पीयूष गोयल ने हाल ही में बर्लिन ग्लोबल डायलॉग को संबोधित करते हुए हिम्मत भरा रुख दिखाया है कि भारत 'सिर पर बंदूक तनवाकर' सौदे नहीं करता।

इस मुश्किल समय में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कहे गए ये साहसी शब्द मुझे उन दिनों की याद दिलाते हैं जब तत्कालीन कृषि मंत्री जगजीवन राम रोम में संयुक्त राष्ट्र खाद्य और कृषि संगठन (एफएओ) के मुख्यालय में एक बैठक से गुस्से में बाहर निकल गए थे। यदि मैं उस वक्त के कृषि सचिव डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन ने मुझसे जो कहा था, उसे सही ढंग से बता पाऊं, तो उन्होंने एक वरिष्ठ अमेरिकी अधिकारी से कहा, 'भाड़ में जाए तुम और तुम्हारी हमें कृषि निर्यात बेचने की नीयत' और आगे कहा – भारत कभी भी अमेरिका से खाद्यान्न आयात नहीं करेगा।' जगजीवन राम 1974 से 1977 तक कृषि एवं सिंचाई मंत्री रहे थे। यह स्वामीनाथन का जवाब था, जब मैंने उनसे पूछा कि आजादी के बाद से लगभग सभी कृषि मंत्रियों के साथ विभिन्न पदों पर काम करने का सौभाग्य मिलने के बाद उन्हें कौन–सा कृषि मंत्री सबसे अच्छा लगा।

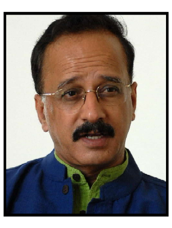

खाने के तेलों में आत्मनिर्भरता हासिल करने के नाम पर, जीएम सोयाबीन इंपोर्ट को सही ठहराना, फिर से एक दिग्भ्रमित कोशिश है।

–देविन्दर शर्मा

इसलिए हमें याद रखना चाहिए कि अमेरिका हमेशा से विशाल भारतीय कृषि बाजार में पैर जमाने की हसरत रखता आया है। कोई आश्चर्य नहीं कि भारत में कृषि उत्पादों के लिए प्रवेश पाना असल में अमेरिका की विदेश नीति की एक बड़ी इच्छा रही है। ऐसा हो नहीं पाया, लेकिन हाल ही में, जब ट्रंप का धक्केशाही वाले और सनकी तरीके से टैरिफ लगाना देशों को नई विश्व व्यवस्था अपनाने को मजबूर कर रहा है। भारत ने चल रही अमेरिका–भारत व्यापार वार्ताओं में अब तो अपनी कृषि, डेयरी और मत्स्य पालन क्षेत्र की रक्षा के लिए बहादुरी से लड़ाई लड़ी है। लेकिन मजबूत घरेलू लॉबियां जो सदा बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हितों के साथ खड़ी रहती हैं और वह भी आत्मनिर्भरता के नाम पर, एक बार फिर सक्रिय हो उठी हैं।

अमेरिका के साथ कपास, सोयाबीन, मक्का, डेयरी, सेब और अन्य स्टोन फ्रूट्स के लिए भारतीय आयात खोलने की जिस दलील को सबके लिए जीत वाला 'रणनीतिक' व्यापार

सौदा बताया जा रहा है, उसमें घरेलू हकीकतों को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। अगला लक्ष्य ज़ाहिर तौर पर चावल होगा, उसके बाद गेहूं, जिसमें अमेरिका का असली हित छिपा है। नीति आयोग ने पहले ही एक वर्किंग पेपर वापस ले लिया है, जिसमें विवादित जेनेटिकली मॉडिफाइड (जीएम) सेब, मक्का और सोयाबीन को प्रवेश देने का मसौदा था, लेकिन कुछ दूसरे मुख्यधारा के अर्थशास्त्री भी हैं जो कपास पर ज़ीरो ड्यूटी इंपोर्ट की तरह दूध एवं दुग्ध प्रोडक्ट्स के लिए भी भारतीय बाजार खोलने को सही मानते हैं। बिना यह अहसास किए कि अमेरिका में उगाने वाले किसान लगभग 8,000 हैं, जिनके खेतों का औसत आकार 600 हेक्टेयर है,उन्हें आज भी सालाना 100,000 डॉलर से ज़्यादा की सब्सिडी मिलती है। इससे इनकी अंतरराष्ट्रीय कीमतें कम हो जाती हैं, जिसकी वजह से विकासशील देशों के किसानों को नुकसान होता है। वहीं दूसरी ओर, भारत में 98 लाख कपास उगाने वाले किसान हैं, जिनके पास औसतन 1 से 3 एकड़ के खेत हैं। सस्ते और सब्सिडी पाए आयात से उनकी जो भी थोड़ी–बहुत कमाई है, वह भी छिन जाएगी। अगर घरेलू कपास उद्योग इसकी बजाय हमारे किसानों के साथ खड़ा हो जाए, तब यह सच में एक 'विन–विन सिचुएशन' है। आयात शुल्क को शून्य करके, भारत ने स्वेच्छा से अपने किसानों को भेड़ियों के आगे डाल दिया है।

बात जब दालों की की जाए, तो मांग एवं पूर्ति वाला समीकरण काम करता दिखाई नहीं देता। पिछले पांच सालों में, दालों की खेती का रकबा काफी कम हो गया है, जो कि 30.7 मिलियन हेक्टेयर से घटकर 27.6 मिलियन हेक्टेयर हो गया है, लेकिन फिर भी ज़्यादा मांग के बावजूद; किसानों को मंडी में मिलने वाली कीमतें बढ़ी नहीं हैं। हकीकत यह है, मौजूदा कीमतें घोषित न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) से लगभग 30 प्रतिशत कम हैं। उत्पादन में कमी को सस्ते आयात से पूरा किया जा रहा है; असल में यह ज़रूरत से दोगुनी मात्रा है, और कई फलीदार दालों (मटर नस्ल) पर आयात शुल्क शून्य है। अकेले 2024–25 में ही 7.6 मिलियन टन दालें आयात की गई हैं। खबरों के मुताबिक, पिछले पांच सालों में यह लगभग चार गुणा हो गया है, जहां 2020–21 में दालों के आयात पर 12,153 करोड़ रुपये खर्च हुए थे वहीं 2024–25 में आयात की मात्रा पहले ही 47,000 करोड़ रुपये को पार कर चुकी है।

खाने के तेलों में आत्मनिर्भरता हासिल करने के नाम पर, जीएम सोयाबीन इंपोर्ट को सही ठहराना, फिर से एक दिग्भ्रमित कोशिश है। हालांकि मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र के सोयाबीन काश्त पट्टी में किसान आश्वस्त कीमत पाने के लिए परेशान हैं, और पंचायत लेवल पर कई ट्रैक्टर विरोध प्रदर्शन हो रहे हैं, लेकिन सोयाबीन का मौजूदा मंडी भाव घोषित न्यूनतम समर्थन मूल्य 5,328 रुपये की बजाय 3,500 से 4,000 रुपये प्रति क्विंटल के बीच है। आश्वस्त कीमत का नदारद रहने (और साथ ही मौसम की मार) के कारण बुवाई रकबे और उत्पादन में गिरावट आ रही है, जीएम सोयाबीन इंपोर्ट की खबरों का कड़ा विरोध हो रहा है। राजस्थान उच्च न्यायालय का हालिया आदेश, जिसमें केंद्र सरकार द्वारा नियम बनाए जाने तक जीएम खाद्यान्न के आयात और बिक्री पर रोक लगा दी है, एक अन्य रुकावट बनेगा।

यह मुझे उस समय की याद दिलाता है जब अमेरिका ने पहले भी जीएम सोयाबीन आयात के लिए भारत पर दबाव डाला था। नई दिल्ली स्थित फोरम फॉर बायोटेक्नोलॉजी एंड फूड सिक्योरिटी के नेतृत्व में एक अभियान के बाद, इंडियन काउंसिल ऑफ एग्रीकल्चरल रिसर्च (आईसीएआर) ने आखिरकार भारतीय बंदरगाहों पर आने पर सोयाबीन की श्रेणियों को अलग–अलग करने के लिए कहा था। इसका अमेरिकी निर्यातकर्ताओं (वरिष्ठ यूएसडीए अधिकारियों के समर्थन से) ने पुरजोर विरोध किया, लेकिन भारत ने घरेलू जीएम नियामक व्यवस्था को दरकिनार कर झुकने से इनकार कर दिया था। यदि आयात किसी भी हाल में ज़रूरी हो जाए तो जीएम सोयाबीन आयात के लिए भी अब यही तरीका अपनाना चाहिए। इसी तरह, मक्का के मामले में भी, मीडिया खबरों के बाद कि आयात शुल्क मौजूदा 50 परसेंट से घटाकर 15–16 प्रतिशत किया जा सकता है, घरेलू कीमतें पहले ही बहुत गिर गई हैं। खबरों के अनुसार 2,400 रुपये प्रति क्विंटल के घोषित न्यूनतम समर्थन मूल्य के मुकाबले, कुछ जगहों पर बाज़ार कीमतें गिरकर 1,100 से 1,200 रुपये प्रति क्विंटल तक आ गई हैं।

दूध के मामले में भी, भारत को कभी भी 'रणनीतिक' व्यापार फायदे के तहत प्रयोगबाजी नहीं करनी चाहिए, जैसा कि कुछ विशेषज्ञ सलाह दे रहे हैं, क्योंकि अमेरिका में भी, पिछले 15 सालों में 93 प्रतिशत छोटे डेयरी फार्म बंद हो गए हैं। फ्रांस में, डेयरी फार्मों को आर्थिक रूप से व्यवहार्य बनाए रखने के लिए दूध के लिए थोड़ी ज्यादा कीमत चुकाने के लिए एक मज़बूत उपभोक्ता अभियान उठ खड़ा है।

भारत को उन दिनों में वापस नहीं जाने दिया जा सकता जब देश का पेट भरने के लिए खाद्यान्न समुद्री जहाजों से आया करता था। भूख से आज़ादी सुनिश्चित करने से ज़्यादा ज़रूरी कुछ नहीं है, और वह भी किसी भी कीमत पर। ❑❑

(लेखक कृषि एवं खाद्य मामलों के विशेषज्ञ हैं।)

https://www-dainiktribuneonline-com/news/comment/opening-the-market-for-foreign-food-grains-under-pressure-would-be-fatal/

प्रदूषण की मार से बेहाल है दिल्ली एनसीआर

पिछले कई हफ्तों से दिल्ली और एनसीआर में प्रदूषण के चलते लोगों का हाल बेहाल हो रहा है। कई एक राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय राष्ट्रीय पर्यावरण रिपोर्ट्स के ताजा आंकड़ों से यह निकलकर आया है कि दिल्ली एनसीआर, उत्तर प्रदेश, हरियाणा और बिहार इस समय दुनिया के सबसे प्रदूषित इलाकों में शामिल है, जहां एयर क्वालिटी इंडेक्स लगातार 400 से 800 के बीच दर्ज किया जा रहा है। प्रदूषण की वजह से हवा में एअरोसॉल की मात्रा भी बढी है, इस कारण भारत के कई क्षेत्रों में पर्याप्त धूप नहीं पहुंच पा रही है। पश्चिमी तट, हिमालय क्षेत्र, दखिन के पठारी क्षेत्र और पूर्वी तट के इलाकों में धूप के घंटे लगातार काम हो रहे हैं। भारत के मौसम विज्ञान विभाग के वैज्ञानिकों के वर्ष 1988 से वर्ष 2023 के बीच भारत के 9 भौगोलिक क्षेत्र के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकला है कि दुनिया भर में प्रदूषिण देश की सूची में भारत का स्थान अव्वल है। दुनिया के 20 सबसे प्रदूषित शहरों में 13 भारत में है। खासकर देश की राजधानी दिल्ली लगातार छठवें साल भी दुनिया की सबसे प्रदूषित राजधानी बनी हुई है। वैज्ञानिकों का मानना है कि वातावरण में एरोसॉल की मात्रा बढ़ाना इसकी मुख्य वजह है, एरोसॉल हवा में मौजूद धूल कालिख और राख जैसे कणों को कहा जाता है, जो हवा में तैरते रहते हैं। कहा तो यहां तक जा रहा है कि दिल्ली का आम वासिंदा प्रतिदिन 18 से 20 सिगरेट पीने के बाद का प्रदूषण मजबूरी में प्रतिदिन झेल रहा है।

विषय के विशेषज्ञों के अनुसार दिल्ली एनसीआर में व्याप्त प्रदूषण बच्चों, बुजुर्गों और गंभीर रोगियों के लिए घातक है, जबकि सामान्य व्यक्ति भी इसकी चपेट में तेजी से आ रहे हैं। प्रदूषण से होने वाली बीमारियों के कारण नगर के अस्पताल खचाखच भरे हुए हैं। कई एक वैश्विक पर्यावरण संस्थान की रिपोर्ट के अनुसार इस समय दुनिया में सबसे ज्यादा प्रदूषण भारत के उत्तरी बेल्ट विशेष रूप से दिल्ली, नोएडा, ग्रेटर नोएडा, गुड़गांव,

इसमें कोई दोराय नहीं कि वर्तमान के प्रदूषण संकट और लगातार बिगड़ते जलवायु के लिए विकसित दुनिया दोषी है लेकिन विकासशील देश प्रमुखता से इस बात को लेते हुए जब तक अपनी जिम्मेवारियों का निर्वहन नहीं करेंगे, प्रदूषण का जहर कम होने की बजाय बढ़ता ही जाएगा।

– डॉ. दिनेश प्रसाद मिश्र

पृथ्वी नामक ग्रह पर भारत ही ऐसा भू–भाग रहा है जहां के निवासियों को सबसे ज्यादा धूप मिलती रही है। लेकिन हाल के बरसों में प्रदूषण में हुई गुणात्मक वृद्धि के कारण धूप की उपलब्धता कम हो रही है। वर्ष 2007 तक धूप की स्थिति पूर्व किस तरह सामान्य थी लेकिन साल 2008 के बाद से इसमें लगातार गिरावट हो रही है। भारत के मध्य क्षेत्र में सालाना 2449 घंटे धूप मिल रही थी, जो कि पहले की तुलना में 4.71 घंटे की गिरावट है।

फरीदाबाद, गाजियाबाद, पटना और लखनऊ में दर्ज किया जा रहा है। अनेक इलाकों में एयर इंडेक्स 700 के पार पहुंच गया है। कहां गया है कि आज दुनिया में 60 करोड़ से अधिक लोग विषैली हवा में सांस लेने के लिए मजबूर हैं।

इन क्षेत्रों में हर साल प्रदूषण के कारण की पड़ताल करते हुए कहा गया है कि सिंधु गंगा के मैदानी इलाकों में उत्तर भारत का यह विशाल समतल क्षेत्र शामिल है जो पश्चिम में पंजाब और हरियाणा से शुरू होकर दिल्ली, पश्चिम मध्य पूर्वी उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड के तराई इलाके बिहार, झारखंड और पूर्वी दिशा में पश्चिम बंगाल तक फैला है। इसमें दक्षिण की ओर जाते हुए उत्तरी–मध्य प्रदेश के कुछ हिस्से भी शामिल हो जाते हैं कि सीमा रेखा में जनसंख्या घनत्व शहरीकरण उद्योग और वहां दबाव कृषिगत विधियां और फसल अवशेष जलाने के मामले प्रदूषण के लिए विशेष रूप से जिम्मेवार हैं। यह क्षेत्र भौगोलिक रूप से प्रदूषण की चपेट में फंसने के लिए अत्यधिक संवेदनशील है क्योंकि उत्तर में हिमालय की दीवार की तरह खड़ा है, जो प्रदूषित हवा और धूल कणों को उत्तर की ओर बहने नहीं देता। दूसरी ओर मैदान का अत्यधिक समतल होना हवा के प्रवाह को धीमा कर देता है।

पृथ्वी नामक ग्रह पर भारत ही ऐसा भू–भाग रहा है जहां के निवासियों को सबसे ज्यादा धूप मिलती रही है। लेकिन हाल के बरसों में प्रदूषण में हुई गुणात्मक वृद्धि के कारण धूप की उपलब्धता कम हो रही है। वर्ष 2007 तक धूप की स्थिति पूर्व किस तरह सामान्य थी लेकिन साल 2008 के बाद से इसमें लगातार गिरावट हो रही है। भारत के मध्य क्षेत्र में सालाना 2449 घंटे धूप मिल रही थी, जो कि पहले की तुलना में 4.71 घंटे की गिरावट है।

भारत में सूरज की रोशनी और धूप की मात्रा में गिरावट गंभीर पर्यावरणी चुनौती का संकेत है इससे ऊर्जा कृषि स्वास्थ्य और जलवायु परिवर्तन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है।

हालांकि भारत के उत्तर पूर्वी क्षेत्र में यह स्थिति कम देखने को मिलती है। गुवाहाटी और डिब्रूगढ़ के इलाकों में कुल मिलाकर देश के अन्य हिस्सों से स्थिति कुछ अच्छी है। वही हिमालय के क्षेत्र में पिछले 20 वर्षों में धूप के घंटे में 9.5 घंटे प्रति साल की दर से कमी दर्ज की जा रही है।

इसमें कोई शंका नहीं कि अचानक बड़े प्रदूषण के पीछे जलवायु परिवर्तन का भी असर है। इसका असर जीवन के हर क्षेत्र पर पढ़ रहा है। सबसे ज्यादा प्रभाव मानव के जीवन तथा खासकर किसान और उसकी कृषि पर है। सर्दियों का मौसम आते ही राजधानी दिल्ली सहित पूरे एनसीआर को धुआं, धुंध और जहरीले कानों का सामना करना पड़ता है परली का धुआं, दशहरा दिवाली के दौरान होने वाली आतिशबाजीपूरे दिल्ली और एनसीआर को जहर का चैंबर बना देती है जहां सांस लेना भी दुबार हो जाता है। दिल्ली की हवा अन्य जगहों की तुलना में 10 गुना जहरीली हो जाती है।जलवायु परिवर्तन को लेकर दुनिया भर में बड़े–बड़े सम्मेलन आयोजित किए जाते हैं लंबी चौड़ी बातें होती हैं लेकिन जमीन पर साल दर साल तापमान भी बढ़ रहा है प्रदूषण भी बढ़ रहा है और धूप लगातार घटती जा रही है। बड़े मंचों पर जब भी ग्लोबल वार्मिंग की बात होती है तो जीवाश्म ईंधन की बात शुरू हो जाती हैयह आता है बात है कि हम प्रकृति से जितना ही दूर होते जाएंगे हमारे जीवन में जीवाश्म ईंधन की आवश्यकता भी उसी के अनुरूप बढ़ती जाएगी प्रकृति से इस दूरी के मूल में हमारा भोजन भी एक प्रमुख तत्व के रूप में शामिल है। आज वातावरण में प्रदूषण और गर्माहट जिस रफ्तार से बढ़ रही है उसे बदलने के लिए हमें अपने प्राचीन पद्धति का भी सहारा लेना ही होगा। इसमें कोई दो राय नहीं कि वर्तमान के प्रदूषण संकट और लगातार बिगड़ते जलवायु के लिए विकसित दुनिया दोषी है लेकिन विकासशील देश प्रमुखता से इस बात को लेते हुए जब तक अपनी जिम्मेवारियों का निर्वहन नहीं करेंगे, प्रदूषण का जहर कम होने की बजाय बढ़ता ही जाएगा। लगातार धूप की कमी से लोगों की जीवन प्रत्याशा भी घटेगी। ❑❑

कांग्रेस (इंदिरा) - स्वतंत्रता-पूर्व भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नाम का मुखौटा

भूमिकाः धर्म (नीति, चरित्र और सत्य) को छोड़ देने के बाद, आज की कांग्रेस (इंदिरा कांग्रेस) निर्लज्ज होकर यह दावा करती है कि यह वही कांग्रेस है, जिसने भारत की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष किया था। वे जानते हों या न जानते हों, 24 घंटे "कांग्रेस" नाम का जाप करते रहते हैं। आज के (इंदिरा) कांग्रेस नेता इस बात का घमंड करते हैं कि वे उस कांग्रेस के उत्तराधिकारी हैं, जिसने स्वतंत्रता आंदोलन का नेतृत्व किया था।

दासरु (संत–कवि) की प्रसिद्ध रचना याद आती है – एंथा लोकवय्या, क्या ज़माना आ गया है? लोगों का मन बदल गया है। धर्म–नीति खो गए हैं, लोभ बढ़ गया है, सत्य और असत्य की पहचान मिट गई है।"

आज के कांग्रेस नेताओं को सुनते हुए यह गीत सजीव उदाहरण बन जाता है। तो सत्य क्या है? क्या आज की (इंदिरा) कांग्रेस वास्तव में वही कांग्रेस है जिसने स्वतंत्रता आंदोलन चलाया था? जब हम इतिहास के परदे को हटाते हैं, तो स्पष्ट दिखता है कि ''पुरानी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस'' और आज की ''इंदिरा कांग्रेस'' में भूमि–आसमान का अंतर है।

आज की कांग्रेस और स्वतंत्रता आंदोलन की कांग्रेस दो अलग संस्थाएँ हैं। इंदिरा गांधी के समय में पार्टी ने अपना मूल चरित्र खो दिया; "गांधी" नाम का राजनीतिक उपयोग किया गया; लोकतांत्रिक मूल्यों के बजाय वंशवाद और सत्ता नियंत्रण सर्वोपरि हो गया

–महादेवय्या करदल्ली

महात्मा गांधी के नेतृत्व में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का इतिहास

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना 28 दिसंबर 1885 को बॉम्बे (मुंबई) के गोकुलदास तेजपाल संस्कृत कॉलेज में ए.ओ. ह्यूम नामक सेवानिवृत्त ब्रिटिश अधिकारी ने की थी। उद्देश्य था कि भारतीय नेता और ब्रिटिश सरकार आपसी बातचीत के माध्यम से समस्याओं का समाधान निकाल सकें।

सच यह है कि आज के कांग्रेस के केंद्र के नेता जिनका उपनाम ''गांधी'' है, वे महात्मा गांधी के वंशज नहीं हैं। कई मुख्यमंत्री और मंत्री मूल स्वतंत्रता-युग कांग्रेस से नहीं, बल्कि अन्य दलों से आए दल-बदलू नेता हैं। आज की कांग्रेस में वंशवाद, सत्ता-लोभ और अवसरवाद ही प्रमुख हैं।

ब्रिटिश शासन ने इसे "सुरक्षा–वाल्व" की तरह बनाया था ताकि क्रांतिकारी भावनाओं का दबाव नियंत्रित रहे। प्रथम अध्यक्ष वोमेश चंद्र बनर्जी थे। धीरे–धीरे यह संगठन सम्मानित देशभक्तों का राष्ट्रीय आंदोलन बन गया। तिलक, गोखले, सी.आर. दास, लाला लाजपत राय, बिपिन चंद्र पाल, नेताजी सुभाषचंद्र बोस, श्यामाप्रसाद मुखर्जी जैसे राष्ट्रनायक इसके नेतृत्व में आगे बढ़े। समय के साथ कांग्रेस अलग–अलग विचारधाराओं और विभाजनों से गुज़री और अंततः ''उसने अपने मूल स्वतंत्रता आंदोलन वाले स्वरूप को इतिहास में विलीन कर दिया।''

वर्तमान कांग्रेस वास्तव में "इंदिरा कांग्रेस" है

आज के कांग्रेस नेता निर्लज्ज होकर स्वयं को स्वतंत्रता सेनानियों का उत्तराधिकारी बताते हैं। किंतु सच्चाई यह है कि आज की कांग्रेस ''नेहरू–इंदिरा परिवार की निजी राजनीतिक संपत्ति'' बन चुकी है।

सच यह है कि आज के कांग्रेस के केंद्र के नेता जिनका उपनाम "गांधी" है, वे ''महात्मा गांधी के वंशज नहीं हैं। कई मुख्यमंत्री और मंत्री मूल स्वतंत्रता–युग कांग्रेस से नहीं, बल्कि अन्य दलों से आए दल–बदलू नेता हैं। आज की कांग्रेस में ''वंशवाद, सत्ता–लोभ और अवसरवाद ही प्रमुख हैं।

कांग्रेस के विभाजन

1) पहला विभाजन – 1907 (सूरत अधिवेशन) – गोपाल कृष्ण गोखले और फिरोजशाह मेहता मध्यममार्गी थे। जबकि तिलक, लाला लाजपत राय, बिपिन चंद्र पाल उग्र राष्ट्रवादी थे। इन दोनों के मतभेदों से प्रथम विभाजन हुआ।

2) दूसरा विभाजन – 1939: सुभाषचंद्र बोस पुनः कांग्रेस अध्यक्ष चुने गए, परंतु गांधीजी के मतभेदों के कारण उन्होंने त्यागपत्र दिया और फॉरवर्ड ब्लॉक की स्थापना की।

3) तीसरा विभाजन – 1969: इंदिरा गांधी और के. कामराज, मोरारजी देसाई, निजलिंगप्पा जैसे वरिष्ठ नेताओं के बीच संघर्ष हुआ। इसके परिणामस्वरूप कांग्रेस दो भागों में टूट गई। कांग्रेस (ओ) संगठन, कांग्रेस (इ) – इंदिरा (आज की कांग्रेस इसी की उत्तराधिकारी है।) यही समय था जब कांग्रेस परिवारवाद की निजी संपत्ति बन गई।

निष्कर्ष

आज की कांग्रेस और स्वतंत्रता आंदोलन की कांग्रेस दो अलग संस्थाएँ हैं। इंदिरा गांधी के समय में पार्टी ने अपना मूल चरित्र खो दिया; "गांधी" नाम का राजनीतिक उपयोग किया गया; लोकतांत्रिक मूल्यों के बजाय वंशवाद और सत्ता नियंत्रण सर्वोपरि हो गया।

आज भी कांग्रेस में प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री, पार्टी अध्यक्ष सब पर एक ही परिवार का अंतिम नियंत्रण बना रहता है। बाकी नेता केवल कठपुतली की तरह कार्य करते हैं।

❑❑

:: सूचना ::

स्वदेशी पत्रिका आर्थिक सम्राज्यवाद के खिलाफ एक सशक्त आवाज है। पत्रिका को ऐसे लोगों से प्रतिक्रियाएं, रिपोर्ट या आलेख की अपेक्षा है जो राष्ट्रहित में सोचते हैं और देश के स्वावलम्बन के लिए कुछ करने की इच्छा रखते है। जरूरी नहीं कि आप पत्रकार या लेखक ही हों, अपने आसपास से जुड़ी चीजों के प्रति आपकी संवदेना है और आप शब्दों में उसे लिख सकते है तो हमें अवश्य लिख भेजें। साथ ही स्वदेशी पत्रिका में छपे लेख आपको कैसे लगते हैं, क्या आप इसमें कुछ नए विषयों का समायोजन चाहते हैं कृपया हमें अवश्य अवगत कराएं। आपके विचारों को हम प्राथमिकता के साथ प्रकाशित करने का भी प्रयास करेंगे।

संपादक, स्वदेशी पत्रिका

'धर्मक्षेत्र', सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

पूरे विश्व में भारतीय आर्थिक दर्शन को लागू करने का समय अब आ गया है

भारतीय आर्थिक दर्शन की जड़ें सनातन हिंदू संस्कृति से जुड़ी हुई हैं। भारतीय आर्थिक दर्शन की नीतियों का अनुपालन करते हुए ही प्राचीन काल में भारत में विभिन्न राजाओं द्वारा अपने–अपने राज्यों की अर्थव्यवस्था सफलतापूर्वक चलाई जाती रही है।

–प्रहलाद सबनानी

आज, वैश्विक स्तर पर कई देशों में विभिन्न प्रकार की आर्थिक समस्याएं दिखाई दे रही हैं, जिनका हल ये देश निकाल नहीं पा रहे हैं। आज विश्व के सबसे अधिक विकसित देश अमेरिका में भी मुद्रा स्फीति, बेरोजगारी, ऋण की राशि का असहनीय स्तर पर पहुंच जाना, विदेशी व्यापार में लगातार बढ़ता घाटा, नागरिकों के बीच आय की असमानता का लगातार बढ़ते जाना (अमीर नागरिक और अधिक अमीर हो रहे हैं एवं गरीब नागरिक और अधिक गरीब हो रहे हैं), बजट में वित्तीय घाटे का लगातार बढ़ते जाना एवं इन आर्थिक समस्याओं के चलते देश में सामाजिक ताने बाने का छिन्न भिन्न होना, जैसे, जेलों की पूरी क्षमता का उपयोग और इन जेलों में कैदियों के रखने लायक जगह की कमी होना, तलाक की दर में बेतहाशा वृद्धि होना, मकान की अनुपलब्धता के चलते बुजुर्गों का खुले में पार्कों में रहने को मजबूर होना, आदि ऐसी कई प्रकार की आर्थिक एवं सामाजिक समस्याएं दिखाई दे रही हैं। उक्त समस्याओं के चलते ही अब अमेरिकी अर्थशास्त्रियों द्वारा खुले रूप से कहा जाने लगा है कि साम्यवाद पर आधारित अर्थव्यवस्थाओं के असफल होने के उपरांत अब पूंजीवाद पर आधारित अर्थव्यवस्थाओं के भी असफल होने का खतरा मंडराने लगा है, और यह अब कुछ वर्षों की ही बात शेष है। उक्त समस्याओं के हल हेतु अब पूरा विश्व भारत की ओर आशाभरी नजरों से देख रहा है और तीसरे आर्थिक मॉडल की तलाश कर रहा है।

भारतीय आर्थिक दर्शन का वर्णन चारों वेद (ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद एवं अथर्ववेद), 18 पुराण, उपनिषद, विदुरनीति, कौटिल्य अर्थशास्त्र, थिरुवल्लुवर, मनुस्मृति, शुक्रनीति, डॉक्टर एम जी बोकारे द्वारा लिखित हिंदू अर्थशास्त्र, श्री दत्तोपंत ठेंगढ़ी द्वारा रचित पुस्तक "थर्ड वे" आदि शास्त्रों एवं धार्मिक पुस्तकों में मिलता है। इस प्रकार भारतीय आर्थिक दर्शन की जड़ें सनातन हिंदू संस्कृति से जुड़ी हुई हैं। भारतीय आर्थिक दर्शन की नीतियों का अनुपालन करते हुए ही प्राचीन काल में भारत में विभिन्न राजाओं द्वारा अपने–अपने राज्यों की अर्थव्यवस्था सफलतापूर्वक चलाई जाती रही है।

भारतीय आर्थिक दर्शन में "विपुलता के सिद्धांत" की व्याख्या मिलती है जिसके अनुसार, बाजार में वस्तुओं की आपूर्ति सदैव ही मांग से अधिक रहती थी। इस सिद्धांत के चलते चूंकि उत्पादों की बाजार में पर्याप्त आपूर्ति रहती थी अतः वस्तुओं के बाजार भाव में वृद्धि नहीं दिखाई देती थी। अतः भारत में प्राचीनकाल में मुद्रा स्फीति की समस्या नहीं थी। जबकि, आज विभिन्न देशों की अर्थव्यवस्थाओं में मुद्रा स्फीति की समस्या सबसे बड़ी समस्या है जिसका हल निकालने में ये देश सक्षम नहीं दिखाई दे रहे हैं। विपुलता के सिद्धांत के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में ही विभिन्न उत्पादों का उत्पादन कर स्थानीय हाट बाजार में इन उत्पादों का विक्रय किया जाता था, जिससे स्थानीय स्तर पर ही स्वावलम्बन का भाव जागृत होता था। कुछ इलाकों में 40/50 गांवों के बीच साप्ताहिक हाट की व्यवस्था विकसित की गई थी। इन साप्ताहिक हाटों में लगभग सभी प्रकार के उत्पादों का विक्रय किया जाता था। चूंकि स्थानीय स्तर पर निर्मित विभिन्न उत्पादों की पर्याप्त मात्रा में बाजार में उपलब्धि रहती

थी, अतः इन उत्पादों की कीमतें भी अपने आप ही नियंत्रित रहती थीं और इस प्रकार प्राचीन भारत में मुद्रा स्फीति के स्थान पर घटते हुए मूल्य के अर्थशास्त्र का वर्णन मिलता है। पूरे विश्व में, इस संदर्भ में, वर्तमान स्थिति भारतीय आर्थिक दर्शन के ठीक विपरीत दिखाई देती है। दरअसल, मुद्रा स्फीति का सबसे बुरा असर गरीब वर्ग पर पड़ता है। आज वैश्विक स्तर पर उत्पादन इकाईयां विभिन्न वस्तुओं की बाजार में आपूर्ति को विपरीत रूप से नियंत्रित करती हैं ताकि इन उत्पादों की बाजार में कीमत बढ़ सके। पूंजीवाद पर आधारित अर्थव्यवस्था में उत्पादन इकाईयों का मुख्य उद्देश्य ही अधिकतम लाभ कमाना होता है और इस मूल्य वृद्धि से समाज के गरीब एवं मध्यम वर्ग पर कितना बोझ बढ़ रहा है, इससे उन्हें कोई मतलब नहीं रहता है।

प्राचीन भारत में मुद्रा स्फीति की समस्या इसलिए भी नहीं रहती थी क्योंकि प्राचीनकाल में भारतीय आर्थिक दर्शन के अनुसार "प्रतिस्पर्धा के सिद्धांत" का अनुपालन सुनिश्चित होता था। ग्रामीण क्षेत्रों में लगने वाले हाट बाजार में उत्पादों के विक्रेताओं के बीच में स्वस्थ प्रतिस्पर्धा रहती थी। उत्पादक अपना सामान बेचकर अपने–अपने ग्रामों में सूरज डूबने के पूर्व वापिस पहुंचने के चलते विक्रेता अपने उत्पादों को सस्ते भाव में बेचना चाहता था अतः बाजार में उत्पादों के मूल्यों में कमी भी दिखाई देती थी। आज, वैश्विक स्तर पर निगमित क्षेत्र में कार्यरत कम्पनियों के बीच आपसी प्रतिस्पर्धा तो एक तरह से दिखाई ही नहीं देती है बल्कि वे आपस में मिलकर उत्पादक संघ (कार्टेल) का निर्माण कर लेती हैं और इन कम्पनियों द्वारा निर्मित उत्पादों के बाजार मूल्यों को अपने पक्ष में नियंत्रित किया जाता हैं ताकि वे इन उत्पादों के व्यापार से अपने लिए अधिकतम लाभ का अर्जन कर सकें। इस पूंजीवादी नीति से इन कम्पनियों की लाभप्रदता में तो वृद्धि होती है परंतु आम नागरिकों की जेब पर अतिरिक्त बोझ पड़ता है।

भारतीय आर्थिक दर्शन के अनुसार, "मूल्य सिद्धांत" के अंतर्गत, विक्रेता द्वारा स्वयं के द्वारा निर्मित वस्तु की उत्पादन लागत पर 5 प्रतिशत की दर से लाभ जोड़कर उस वस्तु का विक्रय मूल्य तय किया जाना चाहिए एवं यदि उस वस्तु का निर्यात किसी अन्य देश को किया जा रहा है तो उस वस्तु के उत्पादन लागत पर 10 प्रतिशत की दर से लाभ जोड़कर उस वस्तु का विक्रय मूल्य तय किया जाना चाहिए। इस नीति के अनुपालन से प्राचीन भारत में विभिन्न उत्पादों के बाजार मूल्य लम्बे समय तक स्थिर रहते थे एवं इनके मूल्यों में वृद्धि लगभग नहीं के बराबर दिखाई देती थी। आज पूंजीवादी नीतियों के अंतर्गत विभिन्न उत्पादों के विक्रय मूल्यों पर किसी भी प्रकार का नियंत्रण नहीं है। विशेष रूप से दवाईयों के मूल्य के सम्बंध में नीति का उल्लेख यहां किया जा सकता है। केन्सर एवं दिल की बीमारी से सम्बंधित दवाईयों के बाजार मूल्य लाखों रुपयों में तय किए जाते हैं क्योंकि इन दवाईयों को बेचने का एकाधिकार "पैटेंट कानून" के अंतर्गत केवल इन दवाईयों का उत्पादन करने वाली कम्पनियों के पास रहता है। केवल लाभ कमाना ही इन कम्पनियों का मुख्य उद्देश्य है, जबकि सनातन हिंदू संस्कृति में किसी अस्वस्थ नागरिक को दवाई उपलब्ध कराने का कार्य सेवा कार्य की श्रेणी में रखा गया है। परंतु, पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के अंतर्गत तो लाभ कमाना ही मुख्य उद्देश्य है।

आज विश्व के कई देशों के पास बेरोजगारी की समस्या को हल करने का कोई उपाय भी सूझ नहीं रहा है। भारत के प्राचीन ग्रंथो में बेरोजगारी की समस्या का जिक्र भी नहीं मिलता है। "स्वयं के नियोजन के सिद्धांत" का अनुपालन करते हुए उस समय विभिन्न परिवारों द्वारा स्थापित अपने उद्यमों को ही आगे आने वाली पीढ़ी आगे बढ़ाती जाती थी, इससे युवाओं में "नौकरी" करने का प्रचलन भी नहीं था। अपने पारम्परिक व्यवसाय में ही युवा पीढ़ी रत हो जाती थी। अतः बेरोजगारी की समस्या भी बिलकुल नहीं पाई जाती थी। आज पूंजीवादी व्यवस्था के अंतर्गत कोरपोरेट जगत की स्थापना के चलते नागरिकों में "नौकरी" का भाव जागृत किया गया है। आज प्रत्येक युवा नौकरी की कतार में लगा हुआ दिखाई देता है, लगभग 30 वर्ष की आयु होते होते जब उसे उसकी चाहत के अनुसार नौकरी नहीं मिल पाती है तो वह अपने जीवन के लिए समझौता कर लेता है और किसी भी संस्थान में किसी भी प्रकार की नौकरी करने को मजबूर हो जाता है। कई इंजीनियर एवं पोस्ट ग्रैजूएट युवा, मजबूरी में आज विभिन्न उत्पादों की डिलीवरी करने एवं टैक्सी चलाने जैसे कार्यों को भी करते हुए दिखाई देते हैं। आज यदि अपने पुश्तैनी व्यवसाय को यह युवा आगे बढ़ा रहे होते तो सम्भवतः उनकी आमदनी भी अधिक होती और उक्त प्रकार के कार्य करने हेतु वे मजबूर भी नहीं होते।

भारत के प्राचीन ग्रंथों में "शून्य ब्याज दर के सिद्धांत" का भी वर्णन मिलता है। राज्यों के पास धन के भंडार भरे रहते थे एवं समाज में यदि किसी नागरिक को अपना व्यवसाय स्थापित करने के लिए धन की आवश्यकता रहती थी तो वह राजा से धन उधार लेकर अपना व्यवसाय स्थापित कर सकता था। स्थानीय नागरिक अपना व्यवसाय स्थापित करने की ओर प्रेरित होते थे एवं नौकरी करने का चलन नहीं के बराबर रहता था। ❑❑

(सेवानिवृत्त उपमहाप्रबंधक, भारतीय स्टेट बैंक, ग्वालियर)

देश की सुरक्षा के लिये चुनौती लेह उपद्रव

लेह लद्दाख में हुए हिंसक उपद्रव ने पूरे देश को झकझौरा और बड़े स्तर पर अचानक हुई हिंसा ने सबसे पहले देश विरोधी विदेशी षड़यंत्रों के प्रति आगाह कर दिया। इस पर चर्चा करने से पहले यह समझना बहुत आवश्यक है की लद्दाख की 43000 वर्ग किलोमीटर अक्साई चीन और शक्स्गम वेली का भाग चीन के अनाधिकृत अधिपत्य में हैं इसलिए लद्दाख में हिंसक उपद्रव किसके हितार्थ हो सकता है।

भारत सरकार के अनुसार, चीन पिछले छह दशकों से लद्दाख में लगभग 38,000 वर्ग किलोमीटर भारतीय क्षेत्र पर अवैध कब्जा किए हुए है। यह दावा भारतीय विदेश मंत्रालय द्वारा किया गया है और यह लंबे समय से चले आ रहे चीन द्वारा खड़े किए गए विवाद का प्रतिफल है। यह क्षेत्र मुख्यतः अक्साई चीन का भूभाग है, जो भारत का है, लेकिन चीन के अनाधिकृत अधिपत्य में है। 1963 में पाकिस्तान ने शक्स्गम घाटी के 5,180 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र को अवैध रूप से चीन को सौंप दिया था, जिस पर अब चीन का कब्जा है। भारत सरकार ने चीन के इन दावों को अवैध बताया है और सीमा के पास अपने बुनियादी ढांचे में सुधार पर ध्यान केंद्रित कर रहा है ताकि सामरिक और सुरक्षा जरूरतों को पूरा किया जा सके।

भारत एलएसी को 3,488 किलोमीटर लंबा मानता है, जबकि चीन इसे लगभग 2,000 किलोमीटर ही मानता है। लद्दाख में भारत–चीन वास्तविक नियंत्रण रेखा 1962 के युद्ध के बाद चीन द्वारा अवैध रूप से कब्ज़ा किए गए क्षेत्र का यह परिणाम है। अक्साई चीन के कुछ हिस्सों पर चीनी कब्ज़ा ऐतिहासिक या कानूनी दस्तावेज़ों द्वारा समर्थित नहीं है। लद्दाख क्षेत्र के दर्रे दुनिया के कुछ राजनीतिक और आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण क्षेत्रों जैसे दक्षिण एशिया, चीन और मध्य पूर्व को जोड़ते हैं। दक्षिण एशियाई देश इस क्षेत्र के माध्यम से मध्य एशियाई बाज़ारों तक पहुँच सकते हैं। उज्बेकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान और कजाकिस्तान जैसे देश यूरेनियम, कपास, तेल और गैस संसाधनों से समृद्ध हैं। मध्य एशिया से इस क्षेत्र के माध्यम से पाइप लाइन का निर्माण कर के भारत की ऊर्जा ज़रूरतें भी पूरी की जा सकती हैं।

लेह की हिंसा ने लद्दाख का पर्यटन उद्योग नष्ट किया है और वहाँ के जनमानस के जीवन यापन को संकट में दल दिया है। पहलगाम की घटना ने 50 प्रतिशत पर्यटन व्यवसाय को नुकसान पहुंचाया था, लेह की हिंसा में यह बढ़कर 80 प्रतिशत हो गया है।

–विनोद जौहरी

जबसे इस हिंसक आंदोलन के सूत्रधार सोनक वांगचुक की भूमिका सामने आई है और सुरक्षा एजेंसियां उन सूत्रों तक पंहुच रही हैं जो इन उपद्रवों के लिए जिम्मेदार हैं, यह चर्चा निरर्थक है की सोनम वांगचुक एक पुरस्कृत पर्यावरणविद या शिक्षाविद या समाजसेवी हैं, बल्कि यह स्पष्ट हो रहा है कि यह सब उनका झूठा आवरण था जिसके पीछे वह लंबे समय से विदेशी फंडों से देश को षड़्यंत्री फंदों में जकड़ रहा था। वांगचुक के विगत कुछ समय के बयान और वीडियो देखे जाएं तो वह लद्दाख में अरब स्प्रिंग जैसे आंदोलन पर जोर देने के साथ–साथ नेपाल में जेनरेशन जेड के विरोध प्रदर्शनों की प्रशंसा कर रहे थे। इसलिए यह कोई स्वाभाविक विद्रोह नहीं था, यह पहले से योजनाबद्ध था। जब वांगचुक गिरफ्तार हुए तब उनके सहयोगियों ने उनका महिमामंडन करते हुए उनकी गिरफ्तारी का विरोध किया था और एक ऐसा इकोसिस्टम सक्रिय हो गया था जो देश विरोधी ताकतों के आदेशों पर अपनी गतिविधियों को चला रहा था। परंतु जब से उनकी विदेशी फंडिंग के खुलासे हो रहे हैं, यह इकोसिस्टम धराशायी होता जा रहा है जिसका कारण केंद्र सरकार की राजनीतिक इच्छशक्ति और देश को अक्षुण्ण रखने की प्रतिबद्धता और किसी विदेशी दवाब में ना आने क्षमता है।

सीबीआई पिछले दो महीने से उनकी संस्था हिमालयन इंस्टीट्यूट ऑफ अल्टरनेटिव्स लद्दाख और अन्य इकाइयों की फंडिंग की जांच कर रही है। आरोप है कि अवैध तरीके से विदेशी फंडिंग ली गई है। सूत्रों का दावा है कि फरवरी 2025 में वांगचुक की पाकिस्तान यात्रा ने भी खुफिया एजेंसियों के कान खड़े किए थे।

हिंसा भड़काने में वांगचुक के अलावा कांग्रेस के कुछ स्थानीय नेताओं की भूमिका भी सामने आई है। लेह स्वायत्त पर्वतीय विकास परिषद में कांग्रेस के एक कांउसलर का वीडियो भी सामने आया है, जिसमें वह भड़काऊ बयानबाजी कर रहे हैं और कथित तौर पर वह हिंसक प्रदर्शनकारियों की भीड़ में भी आगे नजर आए हैं।

सरकार ने 24 सितंबर को लेह में हुई हिंसा के लिए वांगचुक को ज़िम्मेदार ठहराते हुए राजस्थान की जोधपुर सेंट्रल जेल भेज दिया गया। वांगचुक पर राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के तहत केस दर्ज किया गया है।

वांगचुक ने सैंकड़ों कनाल भूमि एक विश्वविद्यालय स्थापित करने के लिए कौड़ियों के दाम पर सरकार से ली, लेकिन वहां विश्वविद्यालय नहीं बना और अंततः सरकार ने वापस ले लिया। उनके संगठन की गतिविधियों की भी जांच हो रही है। केंद्र सरकार ने वांगचुक की संस्था का एफ़सीआरए लाइसेंस रद्द कर दिया है। मालूम हो कि गृह मंत्रालय ने 20 अगस्त 2025 को शो कॉज नोटिस जारी किया था और 10 सितंबर को ई–मेल के जरिए जवाब मांगा था। सूत्रों के अनुसार वांगचुक की संस्था ने 19 सितंबर को जवाब दिया, लेकिन जांच में कई गंभीर उल्लंघन सामने आए। अब लाइसेंस रद्द होने के बाद वांगचुक की संस्था न तो विदेशी फंडिंग ले सकेगी और न ही विदेश से आए पैसे का इस्तेमाल कर पाएगी। साक्ष्य बताते हैं कि वांगचुक और उनकी संस्थाओं से जुड़े कई बैंक खाते छिपाए गए हैं। एचआईएएल के 7 अकाउंट में से 4 घोषित नहीं हैं। पिछले साल 6 करोड़ की डोनेशन इस बार 15 करोड़ रुपये तक पहुंच गई। इनमें 1.5 करोड़ रुपये से ज्यादा की विदेशी रकम बिना एफ़सीआरए रजिस्ट्रेशन के आई। एसईसीएमओएल के 9 खातों में से 6 घोषित नहीं हैं। शेसियन इन्नोवटीओन्स प्राइवेट लिमिटेड में एचआईएएल से सीधे 6.5 करोड़ रुपये ट्रांसफर किए गए। खुद वांगचुक के 9 पर्सनल अकाउंट मिले, जिनमें से 8 घोषित नहीं थे। 2018 से 2024 तक अलग–अलग खातों में 1.68 करोड़ रुपये की विदेशी रकम आई। 2021 से 2024 के बीच उन्होंने अपने निजी खातों से 2.3 करोड़ रुपये विदेश भेजे। वांगचुक कॉर्पोरेट सेक्टर की आलोचना करते रहे हैं, लेकिन रिकॉर्ड दिखाते हैं कि उनकी संस्थाओं ने कई बड़ी कंपनियों और सरकारी पीएसयू से सीएसआर फंड लिया।

लेह अपेक्स बॉडी की यूथ विंग ने बुधवार को लेह बंद का एलान किया था। शहीदी पार्क में धरना शांति पूर्ण शुरू हुआ, लेकिन दोपहर होते–होते अचानक वहां युवाओं का हुजूम पहुंच गया। युवाओं ने 'वी वांट सिक्स्थ शेड्यूल' के नारे लगाते हुए तोड़फोड़ शुरू कर दी। केंद्रशासित प्रदेश लद्दाख को पूर्ण राज्य का दर्ज़ा देने की मांग को लेकर हुआ विरोध प्रदर्शन हिंसक हो उठा और भीड़ ने लेह में बीजेपी कार्यालय में आग लगा दी।

पुलिस के अनुसार, "दिल्ली में प्रारंभिक वार्ता की योजना पहले ही बन चुकी थी लेकिन इससे पहले एक अनशन शुरू किया गया। इसे एक ऐसा मंच बनाया गया जहां शांति और कानून–व्यवस्था को बिगाड़ने वाले तत्वों को आमंत्रित किया गया। एक बड़ा समूह इकट्ठा हुआ और उसमें बड़ी संख्या में असामाजिक तत्व शामिल होगए। 5000–6000 लोगों के एक समूह ने मार्च किया और सरकारी इमारतों और पार्टी कार्यालयों को नुकसान पहुंचाया। उन्होंने पथराव किया और सुरक्षाबलों पर हमला किया।

लेह–लद्दाख में उपद्रव कैसे हुआ, इसकी एक–एक परत खुलकर सामने आ रही है। इतनी भीड़ एक साथ कहां से आ गई? कैसे सिर्फ कुछ विशेष लोगों को निशाना बनाया गया?

(शेष पृष्ठ 35 पर ...)

युगपुरुष दत्तोपंत ठेंगड़ी
संगठन, स्वावलंबन और राष्ट्रसेवा के प्रतीक

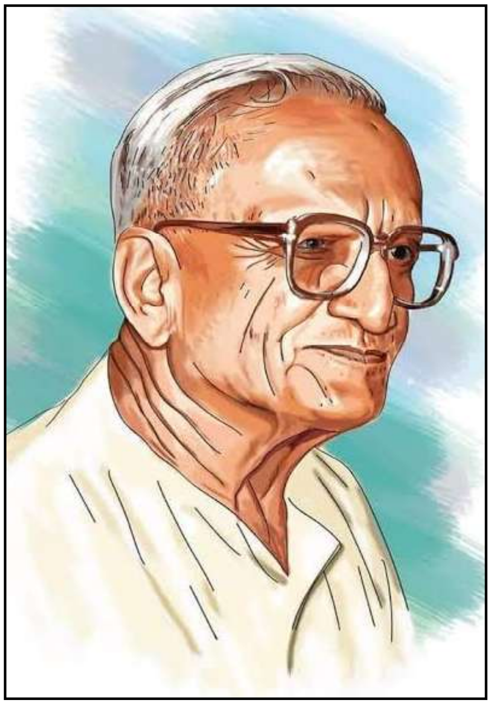

भारतवर्ष ने ऐसे अनेक महान विभूतियों को जन्म दिया है जिन्होंने अपने कर्म, विचार और संगठन से राष्ट्र की दिशा निर्धारित की। ऐसे ही एक युगपुरुष थे दत्तोपंत ठेंगड़ी जी, जिन्होंने जीवनभर "राष्ट्र प्रथम" के सिद्धांत पर कार्य किया। वे केवल संगठनकर्ता नहीं, बल्कि भारतीय आर्थिक विचारधारा के प्रखर दार्शनिक थे। उन्होंने "स्वदेशी", "समन्वय" और "आत्मनिर्भरता" को जनचेतना से जोड़ा। दत्तोपंत ठेंगड़ी जी ने भारतीय विचारधारा के आर्थिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन के क्षेत्र में स्वदेशी, आत्मनिर्भरता और श्रमिक संगठन की सशक्त नींव रखी और भारतीय मजदूर संघ (बीएमएस), भारतीय किसान संघ (बीकेएस), अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी) तथा स्वदेशी जागरण मंच (एसजेएम) जैसे राष्ट्रवादी संगठनों के संस्थापक के रूप में उन्होंने राष्ट्र की आर्थिक और सामाजिक सोच को नई दिशा दी। उनका पूरा जीवन राष्ट्र को आत्मनिर्भर और समाज को संगठित करने के लिए समर्पित रहा। सैकड़ों कार्यकर्ताओं ने उन्हें "दत्ताजी" कहकर संबोधित किया और उन्हें एक पिता समान मार्गदर्शक माना।

दत्तोपंत ठेंगड़ी जी का जन्म 10 नवंबर 1920 को वर्धा (महाराष्ट्र) जिले के आर्वी गाँव में हुआ था। उनके पिता शिक्षक थे। उनके साधारण परिवार में राष्ट्रभक्ति का वातावरण था। बाल्यकाल से ही उनमें अध्ययन, संगठन और नेतृत्व के गुण दिखने लगे। उन्होंने नागपुर के कॉलेज से एमए तथा लॉ कॉलेज, नागपुर से एलएलबी की शिक्षा पूर्ण की। वे प्रारंभ से ही अध्ययनशील और सामाजिक–चेतना वाले थे। छात्र जीवन में वे वाद–विवाद प्रतियोगिताओं, सामाजिक आंदोलनों और छात्र संगठनों से सक्रिय रूप से जुड़े रहे। उन्होंने अपने छात्र–जीवन में ही सामाजिक आंदोलनों में भाग लिया उदाहरणस्वरूप 15 वर्ष की आयु में उन्होंने आर्वी में 'बानर सेना' तथा स्कूल छात्रसंघ की अध्यक्षता की थी।

दत्तोपंत ठेंगड़ी जी ने अपने जीवन से यह सिद्ध किया कि सच्चा राष्ट्रनिर्माण केवल राजनीति से नहीं, बल्कि आर्थिक स्वावलंबन और सामाजिक एकता से होता है।

–विकास खितौलिया

शिक्षा पूर्ण करने के बाद वर्ष 1942 में वे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) के प्रचारक बने और उन्होंने अपने जीवन का प्रत्येक क्षण समाज और राष्ट्र के कल्याण हेतु समर्पित किया। प्रचारक जीवन का अर्थ होता है पूर्णकालिक राष्ट्रसेवा, त्याग और अनुशासन। यह वही पथ था जिसने उन्हें आगे चलकर एक "विचार योद्धा" बनाया। संघ के प्रचारक के रूप में ठेंगड़ी जी ने भारत के विभिन्न क्षेत्रों में संगठन कार्य किया। वे गहन अध्ययनशील और चिंतनशील स्वभाव के थे। संघ के संस्थापक डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार जी और द्वितीय सरसंघचालक गुरुजी गोलवलकर से उन्होंने संगठन के मूल सिद्धांत सीखे "व्यक्ति नहीं, राष्ट्र सर्वोपरि"। ठेंगड़ी जी का उद्देश्य मात्र शाखा विस्तार नहीं था। वे चाहते थे कि राष्ट्र जीवन के हर क्षेत्र में संगठनात्मक शक्ति खड़ी हो इसलिए उन्होंने महसूस किया कि भारत के पुनर्निर्माण की दिशा केवल राजनीति में नहीं, बल्कि समाज, शिक्षा, श्रम और अर्थव्यवस्था के हर क्षेत्र में होनी चाहिए। ठेंगड़ी जी का विचार–दर्शन मुख्यतः तीन आयामों

पर केन्द्रित था श्रमिक संगठन, किसान सशक्तिकरण तथा स्वदेशी आर्थिक मॉडल।

दत्तोपंत ठेंगड़ी जी और डॉ. भीमराव अंबेडकर के बीच व्यक्तिगत संपर्क था। कहा जाता है कि 1954 में भंडारा (महाराष्ट्र) लोकसभा उपचुनाव के दौरान ठेंगड़ी जी ने डॉ. अंबेडकर के चुनाव अभियान में सक्रिय सहयोग किया। अंबेडकर ने भंडारा लोकसभा उपचुनाव में ठेंगड़ी जी को अपना चुनाव एजेंट बनाया था। ठेंगड़ी जी उस समय राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक थे इसलिए उन्होंने अपने स्तर पर आरएसएस कार्यकर्ताओं को अंबेडकर के प्रचार में लगाया, पर्चे बाँटने और जनसभाएँ आयोजित करने में मदद की थी। ठेंगड़ी जी ने अपनी किताब 'डॉ अंबेडकर और सामाजिक क्रांति की यात्रा' में लिखा है कि अंबेडकर और मेरे (ठेंगड़ी) बीच संवाद और संपर्क था। उनके भंडारा लोकसभा उपचुनाव में आरएसएस कार्यकर्ताओं ने बाबासाहेब के लिए दिन रात काम किया था। बाबा साहेब अंबेडकर ने 1940 में आरएसएस की शाखा का दौरा किया था, जहाँ उन्होंने कहा कि "मैं संघ को... एक स्नेह से देखता हूँ।"

आगे चलकर ठेंगड़ी जी ने अनेक महत्वपूर्ण संस्थाओं की स्थापना या पुनर्रचना कर देशहित में अनेकों संगठनों का निर्माण किया। सर्वप्रथम भारतीय मजदूर संघ की स्थापना कर "उद्योग का मजदूरकरण, मजदूर का उद्योगीकरण, राष्ट्र का उद्योगीकरण" का नारा दिया। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में मजदूर आंदोलन पर वामपंथी विचारधारा का प्रभाव बढ़ रहा था। उस समय मजदूर संगठनों में "वर्ग संघर्ष" के नारे से उद्योगपति और श्रमिक के बीच टकराव गहराता जा रहा था। ठेंगड़ी जी ने यह समझा कि संघर्ष नहीं, सहयोग ही स्थायी समाधान है। इसलिए उन्होंने

ठेंगड़ी जी ने ''देश हित सर्वोपरि'' का नारा दिया और मजदूरों को उत्पादनशीलता, अनुशासन और स्वावलंबन के मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी। आज भारतीय मजदूर संघ न केवल भारत का, बल्कि विश्व का सबसे बड़ा गैर राजनीतिक श्रमिक संगठन है, जो ठेंगड़ी जी की दृष्टि और नेतृत्व का परिणाम है।

श्रमिक आंदोलन की नई परिभाषा दी "हम वर्ग संघर्ष नहीं, वर्ग समन्वय में विश्वास करते हैं।

''श्रमिक और उद्योगपति दोनों राष्ट्र रूपी शरीर के दो हाथ हैं।" इसी सोच के आधार पर उन्होंने भारतीय मजदूर संघ की स्थापना 23 जुलाई 1955 को की। उनका उद्देश्य था "श्रमिकों का संगठन राष्ट्र निर्माण की भावना से हो, न कि संघर्ष की भावना से।" ठेंगड़ी जी ने "देश हित सर्वोपरि" का नारा दिया और मजदूरों को उत्पादनशीलता, अनुशासन और स्वावलंबन के मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी। आज भारतीय मजदूर संघ न केवल भारत का, बल्कि विश्व का सबसे बड़ा गैर राजनीतिक श्रमिक संगठन है, जो ठेंगड़ी जी की दृष्टि और नेतृत्व का परिणाम है। यह संगठन संदेश देता था कि श्रमिकों का जीवन राष्ट्र निर्माण के सहयोग से जुड़ा है, संघर्ष से नहीं।

कृषि भारत की आत्मा है, और किसान उसकी रीढ़। इस सत्य को ठेंगड़ी जी ने गहराई से समझा। इसी भावना से उन्होंने 1979 में भारतीय किसान संघ की स्थापना की। इस संगठन का उद्देश्य था किसान को आत्मनिर्भर और स्वाभिमानी बनाना। उसे राजनीतिक लाभ का साधन नहीं, राष्ट्रनिर्माता के रूप में प्रतिष्ठित करना, ताकि वह सरकारी अनुदानों या विदेशी तकनीक पर निर्भर न रहे। उन्होंने किसानों के लिए 'ग्रामीण अर्थव्यवस्था के पुनरुत्थान' का सूत्र दिया। उनका विश्वास था कि भारत का सच्चा विकास गाँवों से ही प्रारंभ होगा।

उन्होंने कहा "कृषि केवल जीविका नहीं, संस्कृति है। भारत की समृद्धि किसान की मुस्कान में बसती है।"

भारतीय मजदूर संघ के निर्माण के पश्चात् ठेंगड़ी जी सार्वजनिक जीवन में राजनीतिक भूमिका भी निभाई। उन्होंने राजनीति को राष्ट्रसेवा का माध्यम माना, सत्ता का नहीं। वे 1964 से 1976 तक राज्यसभा सदस्य रहे और उन्होंने संसद में श्रमिकों, किसानों और स्वदेशी उद्योगों के हितों की आवाज बुलंद की। 1975 के आपातकाल में उन्होंने लोकतंत्र की रक्षा के लिए सक्रिय भूमिका निभाई। उन्होंने विभिन्न विचारधाराओं के नेताओं को एक मंच पर लाकर लोकतांत्रिक संघर्ष को बल दिया। उनका दृष्टिकोण सदैव समन्वयकारी था, संघर्षकारी नहीं। उन्होंने कभी व्यक्तिगत संपत्ति या सुविधाओं को अपनी प्राथमिकता नहीं बनाया, इसलिए उन्हें सादगीपूर्ण जीवन के लिए भी जाना जाता है। उन्होंने समाजवादी नेताओं, किसानों और संघ कार्यकर्ताओं को एकजुट कर "लोकशक्ति" का प्रदर्शन किया।

1990–91 के दशक में जब भारत ने उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण की नीतियाँ अपनाईं तब ठेंगड़ी जी ने भविष्य की चुनौती भाँप ली। उन्होंने चेतावनी दी कि यह नीति विदेशी पूँजी पर निर्भरता बढ़ाएगी और स्वदेशी उद्योगों को कमजोर करेगी। तब ठेंगड़ी जी ने महसूस किया कि विदेशी पूँजी और विचारधारा भारतीय अर्थव्यवस्था और संस्कृति पर गहरा प्रभाव डाल रही है। इसी चेतना से

उन्होंने राष्ट्र की आर्थिक स्वतंत्रता की रक्षा हेतु "स्वदेशी जागरण मंच" की स्थापना की। यह एक ऐसा मंच था जो भारत की आर्थिक स्वतंत्रता और सांस्कृतिक आत्मनिर्भरता का रक्षक बना। आगे चलकर स्वदेशी जागरण मंच ने ग्रामीण उद्योग, कुटीर उद्योग, स्थानीय उत्पादन और आत्मनिर्भरता के पक्ष में एक राष्ट्रीय आंदोलन खड़ा किया। उन्होंने स्पष्ट कहा था कि "भारत की प्रगति विदेशी निवेश से नहीं, भारतीय उद्यम और स्वदेशी संसाधनों के उपयोग से होगी।" यह मंच आज भी आर्थिक नीति और आत्मनिर्भर भारत के विमर्श का महत्वपूर्ण स्तंभ है। आज जब भारत "आत्मनिर्भर भारत" की दिशा में आगे बढ़ रहा है, तो यह आंदोलन उसी विचारधारा का विस्तार है, जिसका बीज ठेंगड़ी जी ने बोया था।

इसके अतिरिक्त उन्होंने अनेक अन्य सह संस्थाएँ स्थापित की या उनका मार्गदर्शन किया जैसे अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद, अखिल भारतीय अधिवक्ता परिषद, भारतीय विचार केंद्र, सामाजिक समरसता मंच आदि संगठनों के जनक दत्तोपंत ठेंगड़ी थे। इन संस्थाओं के माध्यम से उन्होंने यह संदेश दिया कि संगठन–निर्माण के बिना विचार स्थायी नहीं होते और विचार निर्माण के बिना संगठन कर्महीन हो जाते हैं। ठेंगड़ी जी केवल संगठनकर्ता नहीं, एक गहन चिंतक और लेखक भी थे। उन्होंने अपने विचारों को पुस्तकों और लेखों के माध्यम से समाज के सामने रखा। उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं – 'द थर्ड वे', 'संघ एंड ट्रेड यूनियन मूवमेंट', 'वॉट इज रॉन्ग विथ इंडियन इकोनॉमिक पॉलिसीज', 'द इंटीग्रल ह्यूमेनिज्म एंड अवर इकॉनमी प्रॉब्लम'। इन पुस्तकों में उन्होंने भारतीय दृष्टि से आर्थिक नीतियों का विश्लेषण किया और पश्चिमी आर्थिक मॉडलों की सीमाएँ बताईं। उनके लेख आज भी स्वदेशी नीति, श्रमिक कल्याण और आत्मनिर्भर भारत की चर्चा में संदर्भित किए जाते हैं।

दत्तोपंत ठेंगड़ी जी का निधन 14 अक्टूबर 2004 को हुआ परंतु उनके विचार आज भी स्वदेशी, आत्मनिर्भरता और श्रमिक संगठन के हर आंदोलन में जीवित हैं। उनकी प्रेरणा से भारत आज "आत्मनिर्भर भारत" के मार्ग पर आगे बढ़ रहा है। उनकी स्मृति में देशभर में अध्ययन केंद्र, अनुसंधान संस्थान और व्याख्यानमालाएँ आयोजित की जाती हैं। उनकी स्वदेशी चेतना आज 'मेक इन इंडिया', 'वोकल फॉर लोकल' जैसे अभियानों में जीवित है। उनकी प्रेरणा हमें यह सिखाती है कि यदि हमने स्वदेशी विचार, श्रम की गरिमा और राष्ट्र के प्रति समर्पण को जीवन का आधार बनाया, तो भारत निश्चित ही विश्वगुरु की दिशा में आगे बढ़ेगा। दत्तोपंत ठेंगड़ी जी ने अपने जीवन से यह सिद्ध किया कि सच्चा राष्ट्रनिर्माण केवल राजनीति से नहीं, बल्कि आर्थिक स्वावलंबन और सामाजिक एकता से होता है। ❑❑

(लेखक स्वदेशी जागरण मंच से जुड़े रहे, शोधकर्ता एवं विचारक है।)

(पृष्ठ 32 से जारी ...)

देश की सुरक्षा के लिये चुनौती लेह उपद्रव

चुन–चुनकर दफ्तरों में आग लगाई गई। सुरक्षा सूत्रों की मानें तो लेह हिंसा का नेपाल कनेक्शन भी है। नेपाली नागरिकों और नाबालिगों को बुलाया गया। उन्हें उपद्रव करने के लिए भड़काया गया।

इस हिंसा को निस्संदेह अचानक कहा जाए, लेकिन पिछले कुछ समय से जिस तरह से वहां स्थानीय–बाहरी के मुद्दों को तूल दिया जा रहा है, उससे कोई भी कह सकता है कि हिंसा भड़की नहीं बल्कि लेह में अरब स्प्रिंग और नेपाल के जेनरेशन जेड जैसी स्थितियां पैदा करने के लिए भड़काई गई है, क्योंकि लद्दाखियो की विभिन्न मांगो को पूरा किया जा चुका था और राज्य के दर्जे व छठी अनुसूची को लेकर बने गतिरोध को दूर करने के लिए भी अगले माह बैठक होने जा रही थी। लद्दाख में चार जिलों के गठन की प्रक्रिया अपने अंतिम दौर में हैं जबकि लद्दाख में अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षण 45 प्रतिशत से बढ़ाकर 84 प्रतिशत किया गया है। पंचायतों में महिलाओं के लिए 1/3 आरक्षण दिया गया है। भोटि और पर्गी को आधिकारिक भाषा घोषित किया गया है। इसके साथ ही 1800 पदों पर भर्ती की प्रक्रिया भी शुरू की गई। अलग लोकसेवा आयोग के गठन पर भी विचार किया जा रहा है और यह सब केंद्रीय गृहमंत्रालय द्वारा गठित हाई पावर कमेटी के साथ समझौतों का ही परिणाम है।

लेह की हिंसा ने लद्दाख का पर्यटन उद्योग नष्ट किया है और वहाँ के जनमानस के जीवन यापन को संकट में दल दिया है। पहलगाम की घटना ने 50 प्रतिशत पर्यटन व्यवसाय को नुकसान पहुंचाया था, लेह की हिंसा में यह बढ़कर 80 प्रतिशत हो गया है। पर्यटन संगठनों ने चिंता व्यक्त की है। केंद्र सरकार को इस अशांत हो उठे क्षेत्र में शांति का माहौल बनाए रखने और देश विरोधी शक्तियों के दंडित करने को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी होगी। यह देश की सुरक्षा का प्रश्न है। ❑❑

स्वदेशी नवाचारों से मिलेगी अर्थव्यवस्था को मजबूतीः डा. महाजन

स्वदेशी जागरण मंच, तेलंगाना के तत्वावधान में सेमिनार का आयोजन एफटीसीसीआई सुराना ऑडिटोरियम, हैदराबाद में किया गया। इस कार्यक्रम में विभिन्न क्षेत्रों से जुड़े 50 से अधिक उद्योग प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

सेमिनार में भारत के निर्यात पर प्रभाव डालने वाली चुनौतियों तथा उन्हें दूर करने के उपायों पर विस्तृत चर्चा हुई। वक्ताओं ने कहा कि पिछली तीन शताब्दियों में भारत ने अनेक औद्योगिक अवसर खो दिए थे, किंतु आज स्वदेशी नवाचारों के बल पर भारत विश्व अर्थव्यवस्था में नेतृत्व की भूमिका निभाने की स्थिति में है।

स्वदेशी जागरण मंच के अखिल भारतीय सह–संयोजक डॉ. अश्वनी महाजन ने कहा कि देश के विकास मार्ग में पूंजी की कमी, परिवहन सुविधाओं का अभाव, नीतिगत देरी तथा भ्रष्टाचार जैसी समस्याएं अब भी बाधक हैं, परंतु सरकार और उद्योग जगत के समन्वय से इन्हें दूर किया जा सकता है।

कार्यक्रम को संबोधित करने वालों में प्रो. अश्विनी महाजन, स्वदेशी जागरण मंच अखिल भारतीय सह संयोजक; श्री सतीश कुमार, अखिल भारतीय सह संगठन मंत्री, स्वदेशी जागरण मंच; श्री विद्या सागर, चेयरमैन एवं प्रबंध निदेशक, सागर एशिया; तथा डॉ. एस. लिंगमूर्ति, दक्षिण मध्य क्षेत्र संयोजक, स्वदेशी जागरण मंच प्रमुख रूप से शामिल रहे।

वक्ताओं ने देशी उद्योगों को सशक्त करने, स्वदेशी उत्पादों को बढ़ावा देने तथा निर्यात क्षेत्र में पारस्परिक सहयोग को प्रोत्साहित करने पर बल दिया तथा कहा कि भारत को अब अपने व्यापारिक दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना होगा और गुणवत्ता, तकनीकी नवाचार तथा वैश्विक प्रतिस्पर्धात्मकता पर विशेष ध्यान देना होगा ।

वक्ताओं ने यह भी उल्लेख किया कि अमेरिका द्वारा हाल ही में लगाए गए शुल्क भारत के लिए छिपे हुए अवसर सिद्ध हो सकते हैं, जो देश को और अधिक आत्मनिर्भरता की दिशा में अग्रसर करेंगे।

स्वदेशी जागरण मंच देशभर में इस प्रकार के कार्यक्रमों के माध्यम से उद्योग जगत और नीतिनिर्माताओं से आह्वान कर रहा है कि वे मिलकर आत्मनिर्भर भारत और मजबूत निर्यात आधारित अर्थव्यवस्था के निर्माण हेतु कार्य करें।

दत्तोपंत ठेंगड़ी जी की पुण्यतिथि पर 'स्वदेशी चौपाल' आयोजित

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के वरिष्ठ प्रचारक, प्रखर वक्ता और कई ख्यातिलब्ध राष्ट्रीय संगठनों के संस्थापक श्रद्धेय दत्तोपंथ ठेंगड़ी जी की पुण्य तिथि के अवसर पर, स्वदेशी जागरण मंच द्वारा केशव ग्रीन सिटी, सीतापुर में एक विशेष स्वदेशी चौपाल का आयोजन किया गया।

स्वदेशी जागरण मंच के जिला संयोजक मुकेश अग्रवाल स्वदेशी ने चौपाल को संबोधित करते हुए कहा कि राष्ट्र की संप्रभुता के मूल तत्वों में स्वदेशी भाव भी समाहित है। उन्होंने याद दिलाया कि इसी तत्व के आधार पर दत्तोपंथ ठेंगड़ी जी ने 23 नवंबर 1991 में स्वदेशी जागरण मंच की स्थापना की थी। उन्होंने बताया कि वर्तमान में यह संगठन संपूर्ण भारत में 813 इकाइयों के माध्यम से स्वदेशी आंदोलन को निरंतर चला रहा है।

चौपाल की अध्यक्षता करते हुए सह संयोजक अमित श्रीवास्तव ने बताया कि संगठन स्वदेशी संकल्प एवं उद्यमिता विकास यात्रा के माध्यम से जन जागरण अभियान चला रहा है। उन्होंने आगामी दिनों में विभिन्न स्थानों पर स्वदेशी चौपाल एवं स्वदेशी हाट के आयोजन द्वारा आंदोलन को और गति देने की योजना के बारे में जानकारी दी । स्वाबलंबी के सह संयोजक मोहित शुक्ला ने स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग पर बल देते हुए कहा कि स्वदेशी उत्पादों के प्रयोग से हम अपने देश की अर्थव्यवस्था को और अधिक मजबूत कर सकते हैं। चौपाल का संचालन जिला समन्वयक रामकुमार शुक्ला ने किया।

इस अवसर पर आचार्य राकेश शास्त्री, भगवती गुप्ता, हेमांग दोड़ेजा, गुरमीत, राजकुमार, सरवन बंसल, विकास श्रीवास्तव, सुमित बाजपेई, गिरीश लाठ, मोनिका आनंद, प्रतीक अग्रवाल, मुकेश गुप्ता और पुनीत वर्मा सहित कई प्रमुख कार्यकर्ता उपस्थित रहे। कार्यक्रम के अंत में, स्वदेशी जागरण मंच के जिला संयोजक मुकेश अग्रवाल ने सभी का धन्यवाद ज्ञापन किया।

वैश्विक स्तर पर स्वदेशी ही भारत की आत्मा एवं पहचानः डॉ. गोपाल

सोनभद्र नगर में स्वदेशी संदेश यात्रा निकाली गई। स्वदेशी जागरण मंच व स्वाबलम्बी भारत अभियान ने इस यात्रा का आयोजन किया। आने वाले धनतेरस, दीपावली,

भैयादूज, छठ पर्व के साथ ही नित्य प्रति के उपयोग के लिए स्वदेशी समान की खरीदारी के लिए आम जन को जागरूक करने के उद्देश्य से स्वदेशी संदेश यात्रा निकली। अभियान के जिला समन्वयक पूर्व विधायक तीरथराज ने कहा कि स्वदेशी का उपयोग व खरीदारी करना हमारा नैतिक दायित्व व धर्म है। स्वदेशी से हमारे गांव गरीब का कल्याण होता है। एससीएसटी आयोग के उपाध्यक्ष जीत सिंह खरवार ने कहा कि स्वदेशी के बल पर ही हम दुनिया में अपनी एक अलग पहचान बना रहे हैं। नगर पालिका अध्यक्ष रूबी प्रसाद ने कहा कि हम सब को संकल्प लेना होगा अपने देश के विकास के लिए अपने देश का पैसा देश में लगे। घोरावल विधायक अनिल मौयां व सदर विधायक भूपेश चौबे ने कहा कि हमें अपने देश के उत्पाद को छोड़कर विदेशी की बात नहीं करनी चाहिए। डा. गोपाल सिंह ने कहा कि पूरे देश में स्वदेशी को लेकर जागरूकता आ गयी है। आगामी पर्व पर स्वदेशी को बढ़ावा देने के लिए आमजन को आगे आना होगा। वैश्विक स्तर पर स्वदेशी ही भारत की पहचान है। स्वदेशी संदेश यात्रा का शुभारंभ संत कीनाराम स्नातकोत्तर महाविद्यालय लोढ़ी से किया गया।

यात्रा में नरेन्द्र कुशवाहा, रमेश मिश्रा, अशोक मिश्रा, धर्मवीर तिवारी, अजीत चौबे, अमरेश पटेल, ओम प्रकाश दूबे, कृष्णमुरारी गुप्ता, अजीत रावत, राकेश शुक्ला, विनोद जालान, मनीष पाण्डेय, मुन्ना थांगर, अमरेश चेरो समेत तमाम लो शामिल रहे।

स्वावलंबी भारत अभियान को गति देने पर जोर

स्वदेशी जागरण मंच कानपुर प्रांत की एक महत्वपूर्ण बैठक का आयोजन किया गया, जिसमें संगठन के क्षेत्रीय संयोजक (पूर्वी उत्तर प्रदेश) अनुपम श्रीवास्तव विशेष रूप से उपस्थित रहे। उनके कानपुर प्रवास के दौरान हुई इस बैठक में आगामी कार्यक्रमों और अभियानों की रणनीति पर विस्तार से चर्चा की गई। बैठक में 10 नवंबर को आयोजित होने वाले राष्ट्रीय जयंती कार्यक्रम तथा 12 दिसंबर को बाबू गेनू बलिदान दिवस के आयोजन की रूपरेखा तय की गई। इन कार्यक्रमों को जन–जन तक पहुंचाने और अधिकाधिक सहभागिता सुनिश्चित करने के लिए कार्ययोजना बनाई गई। इसके साथ ही स्वदेशी जागरण मंच के 'स्वदेशी स्वावलंबी भारत अभियान को और अधिक प्रभावी रूप से आगे बढ़ाने पर भी विस्तृत विचार–विमर्श हुआ। बैठक में यह निर्णय लिया गया कि अभियान के अंतर्गत युवाओं, उद्यमियों और समाज के विभिन्न वर्गों को जोड़कर आत्मनिर्भरता की दिशा में ठोस कदम उठाए जाएंगे।

बैठक में प्रांत संयोजक सुदीप खरे, प्रांत सह संयोजक केशव बाजपेई प्रांत युवा आयाम प्रमुख करण सिंह, महानगर संयोजक दिव्य मिश्रा, संघर्ष वाहिनी प्रमुख रोहित बाजपेई, सोशल मीडिया प्रमुख निखिल साहनी तथा वरिष्ठ आयाम प्रमुख आनंद अवस्थी सहित अन्य कार्यकर्ता उपस्थित रहे। सभी पदाधिकारियों ने संगठन के आगामी आयोजनों को सफल बनाने और स्वदेशी विचारधारा को जन–जन तक पहुंचाने का संकल्प दोहराया।

स्वदेशी अपनाने से ही होगा आत्मनिर्भर भारत का निर्माण

28 अक्टूबर 2025 को स्वदेशी जागरण मंच एवं स्वावलम्बी भारत अभियान के संयुक्त तत्वावधान में एक विशेष बैठक का आयोजन किया गया। बैठक का आयोजन प्रांत महिला समन्वयक जूली शुक्ला के निजी निवास पर किया गया कार्यक्रम की अध्यक्षता स्वयं जूली शुक्ला ने की, जबकि मुख्य अतिथि के रूप में अनुपम श्रीवास्तव (क्षेत्रीय संयोजक/समन्वयक, पूर्वी उत्तर प्रदेश, स्वदेशी जागरण मंच एवं स्वावलम्बी भारत अभियान) उपस्थित रहे।

बैठक का मुख्य उद्देश्य जन–जन में स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग को बढ़ावा देना और विदेशी उत्पादों की निर्भरता से मुक्ति दिलाने हेतु जन–जागरूकता अभियान को गति देना था। अनुपम श्रीवास्तव ने अपने वक्तव्य में कहा कि स्वदेशी विचार केवल आर्थिक नीति नहीं, बल्कि एक राष्ट्रीय चेतना है। जब तक भारतवासी स्वदेश निर्मित वस्तुओं को प्राथमिकता नहीं देंगे, तब तक आत्मनिर्भरता का सपना अधूरा रहेगा।

उन्होंने कहा कि वर्तमान समय में बाजार विदेशी वस्तुओं से भरा हुआ है, जबकि देश में बने उत्पाद न केवल सस्ते और गुणवत्तापूर्ण हैं, बल्कि इनके उपयोग से देश की पूंजी देश में ही बनी रहती है। यह आम जनता के रोजगार सृजन और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान करता है। श्रीवास्तव ने युवाओं से आह्वान किया कि वे मोबाइल, कपड़े, खिलौने, सौंदर्य प्रसाधन और दैनिक उपयोग की वस्तुओं में भी भारतीय कंपनियों को प्राथमिकता दें। प्रांतीय महिला समन्वयक जूली शुक्ला ने कहा कि स्वदेशी अपनाना अब केवल आंदोलन नहीं, बल्कि एक जीवनशैली बनना चाहिए। उन्होंने महिलाओं से अपील की कि वे अपने घर की खरीदारी में भारतीय उत्पादों को प्राथमिकता दें और अपने बच्चों को भी स्वदेशी विचारधारा से जोड़ें। उन्होंने कहा कि यदि महिलाएं यह ठान लें, तो स्वदेशी आंदोलन घर– घर तक पहुंच सकता है।

कार्यक्रम में वक्ता सुभाष गुप्ता, जूही शुक्ला, संदीप

तिवारी, शोभित सक्सेना, चन्द्रेश पाठक, रत्नेश मिश्रा, अंजना देवी, श्वेता कुमारी, प्रियंका सक्सेना और दुर्गा गुप्ता ने भी अपने विचार व्यक्त किए। सभी वक्ताओं ने कहा कि आज का समय आत्मनिर्भर भारत का है, और इसके लिए आवश्यक है कि हर नागरिक स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग को अपनी प्राथमिकता बनाए।

बैठक में यह निर्णय भी लिया गया कि आगामी दिनों में जन–जागरूकता अभियान के तहत विद्यालयों, महाविद्यालयों, बाजारों और ग्राम पंचायतों में छोटे–छोटे जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किए जाएंगे। इनमें स्थानीय उत्पादकों और कारीगरों को भी प्रोत्साहित किया जाएगा। स्वदेशी उत्पादों के प्रचार हेतु स्थानीय प्रदर्शनियों और मेलों के आयोजन की योजना भी बनाई गई। कार्यक्रम के अंत में जूली शुक्ला ने सभी अतिथियों एवं कार्यकर्ताओं का आभार व्यक्त करते हुए कहा कि स्वदेशी अभियान तभी सफल होगा जब समाज के हर वर्ग का सक्रिय सहयोग मिलेगा। उन्होंने कहा कि स्वदेशी अपनाना केवल आर्थिक स्वतंत्रता नहीं, बल्कि संस्कृति, आत्मगौरव और राष्ट्रीय एकता का प्रतीक है।

स्वदेशी सिर्फ विचार नहीं, एक सोच व राष्ट्रीय भावना भी...

बिष्टुपुर गोपाल मैदान में चल रहे स्वदेशी मेला में क्विज प्रतियोगिता, समृद्ध एवं समर्थ भारत का आधार स्वदेशी के विषय पर संगोष्ठी और सांस्कृतिक संध्या के तहत बबला एवं समूह द्वारा गीत प्रस्तुति कार्यक्रम का आयोजन किया गया. प्रतियोगिता के मुख्य अतिथि जमशेदपुर कोऑपरेटिव कॉलेज के प्राचार्य डॉ अमर कुमार सिंह, विशिष्ट अतिथि स्पर्धा प्रकाशन के निदेशक अजय भागरके, श्रीमन क्लासेस के संस्थापक श्रीमन त्रिगुण, स्वदेशी मेला के सहसंयोजक अमिताभ सेनापति, स्वदेशी जागरण मंच के जिला संयोजक राजपति देवी आदि मौजूद थे। मौके पर डा. अमर ने कहा कि स्वदेशी मेला न केवल हमारी भारतीय संस्कृति, परंपरा और स्वदेशी भावना का उत्सव है, बल्कि यह हमारे आत्मनिर्भर भारत के सपने को साकार करने की दिशा में एक सशक्त कदम भी है. स्वदेशी विचार केवल वस्त्र या वस्तु तक सीमित नहीं है बल्कि यह एक सोच, एक संस्कार और एक राष्ट्रीय भावना है।

क्विज प्रतियोगिता का संचालन श्रीमन त्रिगुण ने किया. कार्यक्रम की अध्यक्षता राजपति देवी, स्वागत भाषण प्रतिभा रानी मिश्रा, मंच संचालन नवनीत सिंह एवं धन्यवाद ज्ञापन अखिल कुमार ने किया।

इसमें प्रथम स्थान रानी लक्ष्मी बाई ग्रुप सह श्रीनाथ यूनिवर्सिटी के शुभोदीप कर मोदक, देवेंद्र नाथ महतो, सोहन मोहंती, अनीस रजक एवं ऋषु राज ने प्राप्त किया. द्वितीय स्थान डॉ राजेंद्र प्रसाद ग्रुप सह अरका जैन यूनिवर्सिटी की सरस्वती कुमारी, प्रभप्रीत सिंह सैनी, युवराज सिंह उजाला एवं श्वेता कुमारी ने प्राप्त किया. तृतीय स्थान लाला लाजपत राय ग्रुप सह जमशेदपुर को–ऑपरेटिव कॉलेज की तृप्ति रानी बेरा, रिमी कुमारी, संतोषी कुमारी, सावित्री बिरुली, प्रियंका चौधरी एवं अंकित महतो ने प्राप्त किया।

संगोष्ठी के मुख्य वक्ता बन्दे शंकर सिंह थे. उन्होंने कहा कि यदि हम आत्मनिर्भर ना बने, यदि हमारी टेक्नोलॉजी भारतीय नहीं हो, यदि हमारी संस्कृति भारतीय नहीं हो, यदि हमारा भोजन जैविक नहीं हो तो आनेवाले समय में हमारा देश न केवल विनाश की ओर जाएगा बल्कि बीमार भी हो जाएगा. सांस्कृतिक संध्या में अतिथि के रूप में मिंटू सिंह, शिव शंकर सिंह, उषा महतो, विश्व हिंदू परिषद के विभाग अध्यक्ष अरुण सिंह उपस्थित रहे।

स्वदेशी सामान को दें प्रथमिकताः सुधांशु विश्नोई

स्वदेशी जागरण मंच महिला इकाई अमरोहा की बैठक शिव मंदिर में आयोजित हुई। इस अवसर पर महिला इकाई की सह–प्रांत प्रमुख अंजु त्रिपाठी ने कहा कि स्वदेशी आंदोलन में महिलाओं की भूमिका आजादी के आंदोलन से महत्वपूर्ण रहीं हैं। वर्तमान काल में स्वदेशी जागरण मंच महिला इकाई प्रांत भर में महिला शक्ति को संगठित कर स्वदेशी सुरक्षा एवं स्वावलंबन अभियान को सफल बनाने के प्रयास कर रहा है।

त्रिपाठी ने कहा कि स्वदेशी वस्तु का अपने जीवन में प्रयोग कर हम अपने देश के रोजगार व बाजार को बचा सकते हैं । प्रांत संघर्ष वाहिनी प्रमुख सुधांशु विश्नोई ने गंगा मेले जाने वाले श्रद्धालुओं से आह्वान किया कि मेले खरीदारी करते समय स्वदेशी समान को प्रथमिकता दें।

विश्नोई ने कहा कि हम दुनिया का सबसे बड़ा बाजार है और अमरिका के राष्ट्रपति दादागिरी से भारत से अपनी शर्तों पर व्यापार कराना चाहते है। उन्हें सबक सिखाने के लिए हमें स्वदेशी को अपनाना होगा। जिला महिला प्रमुख डॉ. प्रिया ने धन्यवाद ज्ञापित करते हुए कहा स्वदेशी देश का प्राण है। हमें अपने देश को बचाने के लिए घर घर अलख जगाकर स्वदेशी के विचार को आगे बढ़ाना होगा। बैठक की अध्यक्षता अनीता विश्वकर्मा ने की। संचालन जिला महिला प्रमुख डॉव प्रिया ने किया।

इस दौरान मीनू गुप्ता, गीता, पारुल गुप्ता, पिंकी, सुनीता, माया, सचिन, राधिश गुप्ता, हर्ष शर्मा आदि लोग मौजूद रहे। ❑❑

स्वदेशी सेमिनार, तेलंगाना

सचित्र झलक

स्वदेशी संकल्प यात्रा

त्रिपुरा

असम

गोरक्ष

पलवल

स्वदेशी पत्रिका डाक तिथि 15–16 नवंबर 2025
एल.पी.सी. दिल्ली, दिल्ली पी.एस.ओ., दिल्ली आर.एम.एस. दिल्ली–06
प्रकाशन तिथि : प्रत्येक माह 10 तारीख

डाक पंजी. संख्या DL-SW/01/4074/2024-26
रजि. आर.एन.आई. पंजी. संख्या 64697/96

स्वदेशी गतिविधियां

स्वदेशी संकल्प यात्रा

सचित्र झलक

भीलवाड़ा

सीतापुर

दक्षिण बंग

बिजनौर

हापुड़

लखीमपुर खीरी

नोएडा

उत्तराखंड

प्रकाशक व मुद्रक डॉ. अश्वनी महाजन द्वारा स्वदेशी जागरण समिति के लिए काम्पीटेंट बाईन्डर्स (प्रिंटिंग यूनिट), नवीन शाहदरा, दिल्ली से मुद्रित और धर्मक्षेत्र, सेक्टर–8, रामाकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022 से प्रकाशित, संपादकः अजेय भारती